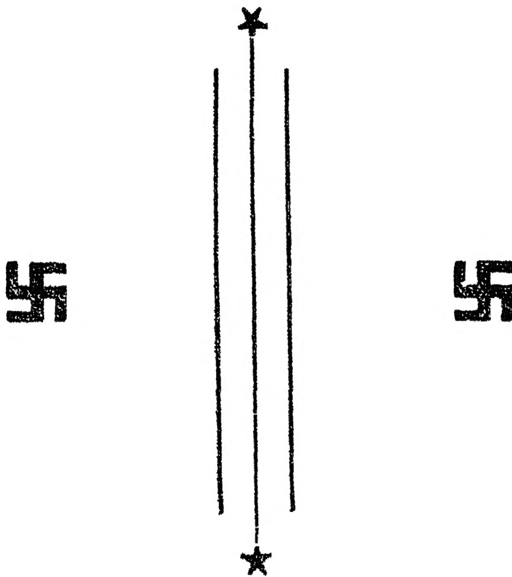


श्री गोरख बोध वाणीसंग्रह



प्रकाशक :

फूलचन्द बुकसेलर

पुरानी मंडी, अजमेर (राज०)

॥ ॐ ॥

श्री गोरख बोध

❀ भजनमाला ❀

सर्वश्री मच्छंद्रनाथजी और गोरखनाथजी महाराज का प्रश्नोत्तर, श्री दत्तात्रेय स्वामी एवं गोरख संवाद तथा अभूतपूर्व ज्ञान–रोचकता मय भजनों का वर्णन है।

卐

लिपि अनुबोधक—टीकाकार
[भारतीय समाज दर्शन, पिंगल रहस्यादि ग्रन्थों के रचयिता]
स्वामी रामप्रकाशजी महाराज अग्रावत
जोधपुर (निवासी)

卐

प्रकाशक :
फूलचन्द बुकसेलर
पुरानी मण्डी, अजमेर (राज०)

[तृतीय संस्करण] [मूल्य ७)००

❀ विषय-सूची ❀

श्री गोरखनाथजी का संक्षिप्त जीवन परिचय

नाथ परम्परा के आदि आचार्य जलंधरनाथजी के शिष्य मतान्तर भेद से गुरुभाई कौल ज्ञानी योगीराज मत्स्येन्द्रनाथजी का अस्तित्व काल अनुमानत: विक्रम की दशवीं शताब्दी के आसपास में अपने प्रमुख शिष्य महान सिद्ध-योगी और प्रसिद्ध महापुरुष गोरखनाथजी (जिनके जीवन वृत्तान्त आदि के बारे में अनेकों धारणायें हैं) जिनका जन्म विक्रम संवत् की दशवीं शताब्दो के अन्त में अथवा ग्यारहवीं शताब्दी के आदि में होना साहित्य-इतिहास साक्ष्य है।

तर्क की सामयिक-कसौटी से इन कोल ज्ञान सम्प्रदाय के महापुरुषों का होना विक्रम संवत के प्रारम्भ से दशवीं या ग्यारहवीं शताब्दी में होना है क्योंकि प्रसिद्ध भर्तृहरि महाराज तथा गोपीचन्द आदि के राज-त्याग तथा योग शिक्षा ग्रहण करने का समत्व काल वहीं पाया जाता है।

यह उन्हीं महापुरुषों की वाणी विक्रम संवत् १८३६ मिति आषाढ़ कृष्ण पक्ष ६ बृहस्पतिवार से श्री रामजीदासजी महाराज के पौत्र शिष्य, श्री तुलसीदासजी के शिष्य बीरम-दासजी के हस्ताक्षर द्वारा लिखित पाण्डु लिपि मुझे प्राप्त

हुई जिसे प्राचीन लिपि-भाषा से अनुबोद्धन करके बड़े परिश्रम से टीका बनाकर परिवर्द्धित-संशोधित रूप में पाठकों के लाभार्थं प्रस्तुत किया। जिसे श्री "फूलचन्दजी" व्यवस्थापक :—आर्य प्रदर्स, पुरानी मण्डी, अजमेर ने प्रकाशित किया। तदर्थं सर्वाधिकार प्रकाशक द्वारा स्वरक्षित है।

आशा है आध्यात्मिक जगत में एक विशेष प्रमाणिक विशुद्धता के साथ साहित्य की समावृद्धि हुई है जिसे देखकर आप महानुभावों के हृदय में बड़ा सन्तोष-भाव उत्पन्न होगा। इसमें यथासाध्य शब्द पाण्डूलिपि के जैसे के तैसे रखने का प्रयास किया है ताकि आन्तरिक भाव की प्राचीनता-भाव-गांभीर्यता बनी रहे। तद्यपि कहीं-कहीं पर जैसे—हर्द=हृदय, निरभै=निर्भय, अनुभै=अनुभव, बूझ्यां=पूछ्यां, जोति=ज्योति आदि शब्दों की लिपि को समानार्थक आधुनिक-उत्तमता को ध्यान में रखते हुए रूप दिया है, ताकि पाठकों को भ्रामिक उलझन न हो सके।

तथांत पाठकों के लाभार्थ कुछ भजन संग्रहित भी देकर पुस्तक को उपयोगी बनाने का पूर्णतः प्रयास किया गया है।



गोरखनाथजी का शास्त्र

—उर्फ—

गोरखबोध भजनमाला

श्री गुरु शिष्य शंका समाधान

गोरख उवाच (१)

स्वामीजी तुम गुरु गोसाइं, अम्हेज शिष शब्द एक बूझिबा
दया करि कहबा, मन कुनि करि बाशेसं ?
आरंभ चेला कैसे करि रहै ? सतगुरु होय सो पूछ्यां कहे ॥१

भावार्थ—गोरखनाथजी अपने श्री गुरुदेव से पूछते हैं कि स्वामीजी ! मैं एक शब्द शिष्य होकर पूछता हूं जिसका उत्तर कृपा कर कहो—यह मन कैसे वश में होता है ? शिष्य को प्रारम्भ में साधक अवस्था में कैसे रहना चाहिए ? शिष्य के प्रश्नों का सत्य उत्तर देवें वही सतगुरु है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू रहबा तो हाटां बाटाँ, रूख वृक्ष की छाया।
तजि बातों काम क्रोध लोभ मोह संसार की माया ॥
आप सूं गोष्ठि अनन्त विचार निद्रा अल्प अहार।
आरंभ चेला ऐसे रहै, गौरख सुणो मछेन्द्र कहै ॥२॥

भावार्थ—हे शिष्य! साधक को चाहिए कि आरम्भिक अवस्था में किसी एक जगह जगत-प्रपची पुरुषों में न रहे और मार्ग, धर्मशाला या किसी वृक्ष की छाया में विश्राम करे और संसार को संसृति, ममता, अहंता, कामना, क्रोध, मोह, लोभ वृत्ति का धारणाओं को त्याग कर अपने आत्म तत्व का चिंतन करे। कम भोजन तथा निद्रा आलस्थ को जीतकर रहे।

गोरख उवाच (२)

स्वामीजी! कोण देखना कोण विचारना,
कोण तत्त ले धरिवा सार।
कोण देश मस्तक मुंडाईया,
कौण ज्ञान ले उतरवा पार।३।

भावार्थ—हे गुरु! साधक को क्या देखना? क्या विचार करना, किस तत्व में वास करना, किसके लिये सिर मुंड़ा कर, किस ज्ञान को लेकर पार उतारना चाहिए।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू आपा देखिबा, अनंत विचारवा, तत्त लो धरिवा सार।
गुरु का शब्द लो मस्तक मुंडाइबा, ब्रह्म ज्ञान ले उतरबा पार।४

भावार्थ—हे शिष्य ! अपने आप को देखना, अनंत अगोचर को विचारना और तत्त्व-स्वरूप में वास करना, गुरु-नाम सोहंशब्द ले मस्तक मुंडावे तथा ब्रह्मज्ञान को लेकर भवसागर पार उतरना चाहिए ।

गोरख उवाच (३)

स्वामीजी मन का कौण रूप, पवन का कौण आकार ।
दम की कौण दशा; साधिबा कौण द्वार ।५।

भावार्थ—हे गुरु ! मन का स्वरूप क्या है ? पवन का आकार क्या है ? प्राणों को दशा क्या है ? और किस द्वार की साधना करनी चाहिए ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू मन का शुन्य रूप, पवन का निरालंब आकार ।
दम की अलेख दशा, साधिबा दसवें द्वार ॥६

भावार्थ—हे शिष्य ! मन का शून्य रूप है, पवन का निराकार आकार है, दम की अलेख दशा और दशवें द्वार की साधना करनी चाहिए ।

गोरख उवाच (४)

स्वामीजी ! कोण पड़े बिन डाल, कौण पंख बिन सूआ ।
कोण पाल बिन नार, कौण बिन कोल मूआ ॥७

भावार्थ—हे गुरु ! जड़ के बिना डाल क्या है, पांखों के बिना पक्षी कौन है ? किनारे बिना नारि कौन है ? और काल बिना कौन मर सकता है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू पवन पेड़ बिन डाल, मन पंख बिन सूआ।

धीरज पाल बिन नार, निद्रा बिन काल मूआ ॥८॥

भावार्थ—हे शिष्य ! वायु बिना पेड़ के डाल (टहनी) है, मन पक्षी बिना पांखों के धीरज बिना पाल (किनारे) को नार (नदी) और बिना काल रूप नींद है।

गोरख उवाच (५)

स्वामीजी ! कौण बीरज कौण खेत्र, कौण श्रवण कौण नेत्र।

कौण जोग कौण जुक्ति, कौण मोक्ष कौण मुक्ति ॥७

भावार्थ—हे गुरु ! किस खेत में बीज क्या है ? श्रवण क्या है ? नेत्र क्या है ? किस जोग में जुगती क्या है ? और मोक्ष किसको कहते हैं, मुक्ति किसको कहते हैं ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! मंत्र बीरज मति क्षेत्र, सुरति श्रवण निरती नेत्र।

करम जोग धूरम जुगति, ज्योति मो बिजवाला मुक्ति ॥१०

भावार्थ—हे शिष्य ! बुद्धि रूपी खेती में मंत्र-जप का बीज फल देता है। अन्तःकरण का सुरता रूप वृती को श्रवण तथा निरति चक्षु दृष्टि को नेत्र कहते हैं। कर्त्तव्ययोग, धर्म ही युक्ति और त्राटक साधन से त्रिकुटी स्थान ज्योति दर्शन ही बिना ज्वाला की मुक्ति है।

गोरख उवाच (६)

स्वामीजी ! कौण मूल कौण बेला, कौण गुरु कौण चेला।

कौण खेत्र कोण मेला, कौण तत ले रमे अकेला ॥११

भावार्थ—हे गुरु! वृक्ष का मूल को सहारा क्या है, गुरु कौन है? चेला कौन है? स्थान क्या है? मिलाप क्या है? और किस तत्त्व को धारण करके अकेला विचरण करता है।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू! मन मूल पवन बेला, शब्द गुरु सुरतो चेला।
त्रिकूटि क्षेत्र उलटि मेला, निरवाण तत ले रमो अकेला ॥१२

भावार्थ—हे शिष्य! मन रूपी मूल का पवन सहारा है। शब्द सतगुरु, अन्तःकरण की एकांत सुरति वृति चेला है। त्रिकूटी स्थान पर उलट कर जोव-ईश्वर का मिलाप होता है, निरवाण ब्रह्म तत्व के आधार पर निवृति परका अकेला विचरण करो।

गोरख उवाच (७)

स्वामीजी! कोण घर चंद कोण घर सूर,
कोण घर काल बजावे तूर।
कोण घर पांच तत्व सम रहे,
सतगुरु होय सो बूझ्यां कहै ॥१३

भावार्थ—हे गुरु! स्वरोदय में चन्द्र कहां है? सूर्य को स्थान कहां है? काल किस घर में नाद बजाता है? पांचों तत बराबर किस स्थान पर रहते हैं?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू मन घर चंद पवन घर सूर,
शुन घर काल बजावे तूर।

ज्ञान घर पांचों तत सम रहे,

ऐसा विचार मछंद्र कहे ॥१४

भावार्थ—हे शिष्य ! मन के स्थान चन्द्र, पवन के संग में सूर्य शून्य के स्थान में काल का नाद बजता है, ज्ञान के स्थान में पांचों तत्व की समता रहती है।

गोरख उवाच (८)

स्वामीजी कोण अमावस कौण पड़वा,

कहां का महा रस कहां ले चढ़िबा?

कौण स्थान मन उनमुनि रहे,

सतगुरु होय सो पूछयां कहे ॥१५

भावार्थ—स्वर स्थान में अमावस का क्या है? पड़वा (शुक्ल प्रतिपदा) क्या है? कहां का महारस आनन्द लेकर कहां पर चढ़ता है। किस स्थान पर मन का अवधान अन्तर्ध्यान रहता है।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! रवि अमावस चंद सू पडवा,

अर्ध का महारस ऊर्ध ले चढ़िबा ?

गगन स्थाने मन उनमुनि रहे,

ऐसा विचार मचछन्द्र कहे,

भावाथ—गुरु मच्छन्द्रजी कहते हैं—हे शिष्य सूर्य स्वर अमावस, चन्द्र स्वर प्रतिपदा, नाभी स्थान का प्राण रस लेकर गगन स्थान चढ़ता और दशवें में मन अन्तर्ध्यान रहता है।

गोरख उवाच (६)

स्वामीजो आदि का कोण गुरु, धरती का कोण भरतार।
ज्ञान का कोण स्थान है, शुन का कहाँ है द्वार ॥१७

भावार्थ—हे गुरु! ज्ञान कौन है? पृथ्वी का पति कौन है? ज्ञान का स्थान कौन है? शुन का द्वार कहां है?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू! आदि का अनादि गुरु, धरती का अंबर भरतार।
ज्ञान का स्थान चितन है, शुन का परचा द्वार ॥१८

भावार्थ—हे शिष्य! आदि का गुरु अनादि है, पृथ्वी का पति आकाश है, ज्ञान का चिंतन में निवास है और शून्य का स्थान परचा (ब्रह्म) है।

गोरख उवाच (१०)

स्वामीजो कौण परचे माया मोह छूटे,
कौण परचे शशि सूर फूटे।
गौण परचे लागे बंध,
कौण परचे अजरावर कंध ॥१६

भावार्थ—हे गुरु, किस साधन से माया मोह बंधन की निवृत्ति होती है, किस परचे (साधन) से चन्द्र-सूर्य स्वर की सिद्धि होती है। किस साधन से योग-बंध की सिद्धि तथा किस साधन से उजर बंध की सिद्धि होती है।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू मन परचे माया मोह छूटे,
पवन परचे शशि घर फूटे ।
कान परचे लागे बंध,
गुरु परचे अजरावर कंध ॥२०

भावार्थ—हे शिष्य ! मन के परचे (साधे-वश करने) से माया मोह की निवृत्ति, पवन वश करने से चन्द्र-स्वर-सिद्धि तथा ज्ञान सिद्धि से योग बंध (जीव ईश्वर एकता) गुरु की प्रसन्नता से अजर बंध (जीवन मुक्ति तत्व) सिद्धि की प्राप्ति होती है ।

गोरख उवाच (११)

स्वामीजी ! कहां बसे मन कहां बसे पवन,
कहां बसे शब्द कहां बसे चंद ।
कौन स्थान ए तत रहे,
सतगुरु होय सो पूछ्याँ कहै ॥२१

भावार्थ—हे गुरु ! मन का निवास कहां है ? पवन का वास कहां है ? शब्द का निवास ? चन्द्र का निवास कहां है ? किस स्थान पर तत्व का वासा है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! हृदय बसे मन, नाभी बसे पवन,
रूपे बसे शब्द गगन बसे चन्द्र ।
अर्ध स्थाने ए तत रहे,
ऐसा विचार मच्छंद्र कहै ॥२२

भावार्थ—हे योगी ! मन का वास हृदय में, पवन का नाभी में, शब्द का आवास रूप में, चन्द्र-सिद्धि का वासा गगन (दशवें) में तथा तत्त्व शब्द का वासा निम्न (नाभी) स्थान में है ।

गोरख उवाच (१२)

स्वामीजी ! हृदय न होता तब कहां होता मन,
नाभी न होती तब कहां रहता पवन ।
रूप न होता तब कहां रहता शब्द,
गगन न होता तब कहाँ रहता चंद्र ।।२३

भावार्थ - हे स्वामी ! जब हृदय एक देश वाची स्थान नहीं था तब मन का वासा कहां था ? नाभी वाचक स्थान नहीं होने से पवन कहां रहता ? रूप की उत्पत्ति से पहले शब्द कहां था ? गगन (दशवां) होने से पहले चन्द्र कहां रहता था ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! हृदय न होता तब शुन रहता मन,
नाभी न होती तब निरमल निरंकार होता पवन ।
रूप न होता तब शुन्नि रहता शब्द,
गगन न होता तब अन्तरिक्ष रहता चंद ।।२४

भावार्थ—हे अवधू ! हृदयवाची स्थान में होने से मन शून्यकार रहता, नाभी के अभाव में स्पंद निपंस्द अलंकार रहित पवन रहता । रूप के अभाव में शब्द शून्य रहता, गगन न होने के समय चन्द्र (सिद्धि) ब्रह्म-लुप्त रहता ।

गोरख उवाच (१३)

स्वामीजी ! रात्रि होती दिन कहां ते आया,

दिन होते रात्रि कहां समावे ।

दीवा बुझाना ज्योति कहां लिया बास,

पिंड न होता तब कहां प्राण का निवास ।।२५

भावार्थ—हे गुरुदेव ! रात्री थी तब दिन कहां से आया और दिन (प्रकाश) होते ही रात्री (अंधकार) का लीन-भाव कहां हो जाता है ? दीपक बुझने पर ज्योति कहां लय होती है ? शरीर नहीं था तब प्राण-शक्ति का निवास कहां था ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू रात्री होती दिन सहजे आया,

दिन प्रकाशें रात्रि सहज समाया ।

दिवा बुझाना ज्योति निरंतर बास,

पिंड न होता तब प्राण का शुन्न निवास।२६

भावार्थ—हे योगी ! अज्ञानान्धकार भूल माया प्रकृति स्वरूप अनिच्छा रात्रि में चेतनत्व-घन शक्ति प्रकाश का सहज ही समावेश हुआ तब ज्ञान-प्रकाश चेतन प्रभाव से अज्ञान तिमिर जड़ भाव स्थिलत्व का विलीन हो गया । दीपक (मानव शक्ति) के बुझने पर चैतन्य-ज्योति चिदाकाश कूटस्थ (निरन्तर) में वास करती है । शरीर न होने पर प्राण का शून्याकाश में तत्व रूप सूक्ष्मांश निवास था ।

गोरख उवाच (१४)

स्वामीजी ! काया मध्ये के लख चंद,
पुहुप मध्ये कहां बसे गंध।
दूध मध्ये कहां बसे घीव,
पिन्ड मध्ये कहाँ बसे जीव ॥२७

भावार्थ—हे गुरू ! शरीर में चंद्र का निवास कहां है ? फूल में सुगंध का वास कहां है ? दूध में घी तथा शरीर में जीव का आवास कहां-कहां पर है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू काया मध्ये द्बेला चंद्र, पुहुप मध्ये चेतन गंध।
दूध मध्ये निरंतर घीव, पिंड मध्ये सर्व व्यापक जीव ॥२८

भावार्थ—शरीर में स्वरोदय इडा नाडी तथा त्रिकूटी स्थाने दो चंद्र स्थान, पुष्पों में चैतन्य-सामान गंध पूर्ण रहती है। दूध में घी अन्तरहित व्याप्त तथा इसी प्रकार शरीर के प्रत्येक रोमांश में जीवात्मा की अव्यहृत शक्ति रहती है।

गोरख उवाच (१५)

स्वामीजी कहाँ बसे चंद कहां बसे सूर,
कहां बसे नाद बिंद का मूर,
कहां चढि हंसा पोवे पाणी,
कौण शक्ति प्राण घर आणी ॥२९

भावार्थ—हे गुरु ! अन्तरहित साधना-मार्ग में चन्द्र, सूर्य तथा नांद, विंद का स्थान कहां-कहां पर है । हंसा कहां

की उन्नति पद आरूढ़ता से शांति की बून्द पीता है और प्राणभवन में किस शांति का केन्द्र-बिन्दु लाया जाता है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू उर्ध बसे चन्द अर्ध बसे सूर,
हृदय बसे नाद बिंद जो मूर ।
गगन चढि हंसा पीवे पाणी,
उलटि शक्ति आप धरि आणी ॥३०

भावार्थ—हे शिष्य ! अन्तरहित साधना में गगन (दशवें) स्थान चन्द्र (ज्ञान ध्येय) और निम्न नाभी स्थाने अग्नि-नागनि नाड़ी में सूर्य का निवास है। शब्द का निवास हृदय में है जो बिन्दु का मूल स्रोत-केन्द्र है। जीवात्मा पवन-कसौटी से दशवें चढ़कर शान्ति बून्द को प्राप्त करता है। अपनी शक्ति को उलटि कर स्थिर की गई।

गोरख उवाच (१६)

स्वामीजी ! कहाँ उत्पत्ति ते नाद, कहाँ नाद समि भवते ।
कौण ले स्थापिते नाद, कहां नाद विलियते ॥३१

भावार्थ—हे गुरु ! शब्द की उत्पत्ति कहां होती है। और शब्द कहां समभाव, कहां स्थापन, एवं कहां विलय होता है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ओंकार उत्पत्ति ते नाद, नाद शुभ सम भवति ।
पवन ले स्थापिते नाद, नाद निरंजन विलियते ॥३२

भावार्थ—हे शिष्य ! ओ३मकार बीजमन्त्र से शब्द की उत्पत्त, शून्याकाश में नाद की समता पवन (वायु) के संग से (शब्द ध्वनि) की स्थिरता और निरञ्जन (महाकाश गगन) एक्यता में शब्द का विलय हो जाता है ।

गोरख उवाच (१७)

स्वामीजी ! नादे न नादिबा बिंदे न बिंदवा,
गगने न लाईबा आशा ।
नाद बिंद दोऊ ना होईगा,
तब प्राण का कहां होइगा बासा ॥३३

भावार्थ—हे गुरु ! सृष्टि के आरम्भ अन्त में नाद तथा शब्दाकाश, बिन्दु तथा वीर्य प्रजनन शक्ति नहीं थी । शून्याकाश का आशाद्वार और नाद बिंदु दोनों के अभाव में प्राणवायु का निवास कहां होगा ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू नादे भी नादिवा बिंदवी,
बिंदवा गगने दिलाईबा आशा ।
नाद बिन्द दोऊ न होईगा,
तब प्राण पुरुष का विरंतरि होईगा बासा ।३६

भावार्थ—हे अवधू ! शब्द, शब्दाकाश, बिन्दु-प्रजनन शक्ति शून्याकाश-आशाद्वार (नाद बिंदु) रहित सृष्टि में अणु-परमाणु वाद सिद्धांतानुसार प्राण चैतन्य शक्ति का महाकाश भूम में निवास होगा ।

गोरख उवाच (१८)

स्वामीजी ! आकार छूटसी निराकार होवसी,
पवन न होसी पाणी ।
चंद सूर दोऊ नहीं होसी,
तब हँस की कौण निशाणी ।।३५

भावार्थ—हे गुरु ! देहाध्यास सृष्टयाकार प्रलय होते समय वायु जल चन्द्र, सूर्यादि, पांचों तत्व नहीं रहेंगे तब जीवात्मा का निवास कहां होगा ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! सहज हँस का खेल भणीजे,
शुन्य हँस का वासा ।
सहज ही आकार निराकार होसी,
परम ज्योति हँस का निवासा ।।३६

भावार्थ – हे शिष्य ! साकार सृष्टि देह जीवात्मा की लीला वपु ख्याल है, जब यह आकार विलय हो जाएगा तब स्थूल-सृष्टि उत्पत्ति से पूर्व की स्थिति वत शून्याकार परम चैतन्य प्रभा स्वरूप जीवात्मा रहेगा ।

गोरख उवाच (१८)

स्वामीजी ! अमूल का कौणो मूल, कहां का बास ।
ता पद का गुरु कौण है पूछत यति गोरखनाथ ।।३७

भावार्थ –हे गुरु ! जो सृष्टि स्वरूप वृक्ष अमूल (बिना गौड, जड़ के) है तो पद का गुरुत्व निवास कोण है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! अमूल का शुन मूल है, मूल निरन्तर वास ।

ता पद का निरवाण गुरु, कथत मच्छन्द्रनाथ ॥३८

भावार्थ—हे शिष्य ! अस्थिर सृष्टि का मूल तत्व पिता आकाश है, जिसका निवास अर्द्ध बिंदु तुरियगा में है। तिस का गुरुत्व माया उपाधि रहित कल्याण स्वरूप है।

गोरख उवाच (२०)

स्वामीजी ! कहाँ ते उत्पत्ति प्राण, कहाँ उत्पत्ति ते मन ।

कहां उत्पत्ति ते वाचा, कहां वाचा विलोयते ॥३९

भावार्थ—हे गुरु ! प्राण उत्पत्ति कहां से हुआ। मन की और वाणी की उत्पत्ति कहां से होकर वाणी का विलय कहां हो जाता है।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! अवगति ते उत्पन्न प्राण, प्राण उत्पत्ति ते मन ।

मन उत्पत्ति ते वाचा, वाचा मन विलोयते ॥४०

भावार्थ—हे प्रश्नी ! आकाश की स्फन्द गति से वायु (प्राण) प्राण से मन क्रमशः वाणी का उद्भव हुआ और वाणी का मन में विलय हो जाता है।

गोरख उवाच (२१)

स्वामीजी ! कौण सरोवर सनाल,
कोण मुखी बंचिवा जम का जाल।
लोक अगोचर कासों लहै,
मन पवना कैसे सम रहे ॥४१

भावार्थ—हे गुरु ! जो स्थिर तालाब बहता रहे वह कौण है ? किस मुख से यम-जाल (भवचक्र) से मुक्ति होय ? प्राण चैतन्य-पद (मुक्ति कैसे प्राप्त करे) और मन-पवन की संयमता कैसे रह सकती है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! मन सरोवर अंगुल बारा बहे,
रोज करे जप थिरता गहे।
सहजे लोक अगोचर लहे,
मन पवना ऐसे सम रहे ।४२

भावार्थ—हे शिष्य ! मन स्वरूप तालाब बारह अंगुल स्वरोदय चन्द्र स्वर में बहता रहता है और एकांत मनन (जप-स्मरण) करने से स्थिर (सुषमना) भाव रहता है । साधना से प्राणी मुक्ति प्राप्त करता है और ऐसे ही मन पवन एकता (संयम) रहता है ।

गोरख उवाच (२२)

स्वामीजी ! कौण सविषमी करै संधि,
कौण चक्र लागे बंध ।
कौण चेतन उनमुनि रहे,
सतगुरु होय सो पूछ्यां कहे ॥४३

भावार्थ—कठिनाई पूर्व स्थल-भूमि कौण हैं ? और किस बंध से चक्र सिद्धि होती है ? कौण चेतन है जो उनमुन में रहता है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! अन विमली विषमी बंध चौकी ऊपर लागे बंध ।
सदा चेतन उनमुन रहे, ऐसा विचार मच्छन्दर कहे ।।४४

भावार्थ—हे शिष्य ! मल, विपेक्ष सहित दु:साध्य भूमि हो तो योग में कठिनाई है । नाभी के उडियान बंध से सिद्ध मूर्त तथा साक्षी चेतन ही उनमुनि में रहता है ।

गोरख उवाच (२३)

स्वामीजी ! कहां ते उत्पना व्यापक कहां,
आदि का ऽस्तुति समाई ।
ए तत गोसाई कहो समझाई,
जहां हमारी उत्पत्ति रहाई ।।४५

भावार्थ—हे गुरु ! जीवात्मा कहां से उत्पन्न हुआ, कहां विलीन होगा अर्थात् व्यापक कहां है और समा कहां जायेगा । इस तत को समझा कर आदि, मध्य,अंत जनक स्थिति में हमारी उत्पत्ति को कहो ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! तिल मध्ये यथा तेल, काष्ट मध्ये हुतासन ।
पहुप मध्ये यथा बास, यूं देही में देवता ।।४६

भावार्थ—हे शिष्य, जीवात्मा का व्याप्य-भाव सदैव इस शरीर में तिलों में तेल, लकड़ी में सामान्य अग्नि, फूल में सुगंधी की भांति सामान्य चैतन्य अवस्था से रहती है । जीवात्मा अनादि, सत्य, अविनाशी है ।

गोरख उवाच (२४)

स्वामीजी ! अपणो कहौ कै कौणे भाई,

बंक नाल है कौणे ठाई।

जब यह प्राणि निशि करे,

पिंड मध्ये प्राण पुरुष कहां रहे॥४७

भावार्थ—हे गुरु ! योग वृत्ति में दुःसाध्य सर्पणी (नागिन) क्या है, कहां निवास है, बंकनाल का स्थान कहां है ? प्राणी जब विश्राम काले निद्रा मध्य निशि करे तब शरीर में प्राण-चैतन्य का निवास कहां रहता है।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू अपणो कहो के सहज सुभाइ,

बंक नाल है नाभि ठाई।

जब यह प्राण निशि करे,

पिंड मधि प्राण पुरुष अपरछंद रहे॥४८

भावार्थ—हे शिष्य ! साधना स्थल में एक नागनी नामक गोलाकार नाड़ी है, जिसका मुख सदैव ऊपर रहता है, जिसे पश्चिमोत्थान नामक आसन द्वारा जाग्रत कर निम्नोत्मुख कर के योगी अमृत पान करते है। बंकनाल दो प्रकार की है जिसमें नाभि स्थान मुक्त बंक है। जब प्राणी विश्राम करे तब शरीर में शक्ति स्वच्छन्द व्यापक रहती है।

गोरख उवाच (२५)

स्वामीजी ! कौण चक्र में दिन करि चंद,

कौण चक्र में लागे बंध।

कौण चक्र में पवन निरोधे,
कौण चक्र में मन परमौधे ।
कौण चक्र में धारे ध्यान,
कौण चक्र में लीजे विश्राम ॥४६

भावार्थ—हे गुरु ! प्रकाशमय ज्योति की प्राप्ति चन्द्र किस चक्र में करता है ? किस चक्र के वध से अमृत प्राप्ति होती है ? किस चक्र साधन से प्राण-वायु वशीकरण (स्थिर) होती है और मन की शिक्षा किस चक्र साधन से प्राप्त होती है । किस चक्र में ध्यान करना तथा किस चक्र साधन से चित विश्राम होता है।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! अर्ध चक्र में दिनकरि चंद,
ऊर्ध चक्र में लागे बंध ।
नाभी चक्र में पवन निरोधे,
हिरदा चक्र में मन परमौधे ।
काण्ठ चक्र में धारे ध्यान,
ज्ञान चक्र में लीजे विश्राम ॥५०

भावार्थ—हे शिष्य ! मूलाधार से नाभी-प्रमाण चक्र सिद्धि से चन्द्र-स्वर सिद्ध होकर ज्ञान प्रकाश करता है । जालन्धर बंध लगाकर अमृत प्राप्त करना और नाभि स्थाने स्वाधिष्ठान सिद्धि से प्राण-वायु का निरोध करना, हृदय स्थाने अनाहत चक्र में मन को आध्यात्म शिक्षा मिलती है । कण्ठ स्थाने विशुद्ध चक्र में जीवात्मा "सोहं" ध्वनि का ध्यान और ज्ञान चक्र (आज्ञा) में ज्योति दर्शनोपरांत ब्रह्म रन्ध्र में विश्राम की प्राप्ति होती है ।

गोरख उवाच (२६)

स्वामीजी ! कौण उदै माया शुनि,
नवग्रह कैसे पाप सु पुनि ।
कौण ग्रह ले उनमुनि रहै,
सतगुरु होय सो पूछ्यां कहै ।।५१

भावार्थ—हे गुरु ! माया की हद किस शून्य तक है ? नवग्रहों से पाप-पुण्य की प्राप्ति कैसे होती है ? किस ग्रह (देव) को लेकर उनमुन (ध्येय-मग्न) रहें ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! बोलत जैसे माया शुनि,
नवग्रह विचारे तो पाप न पुनि ।
शिव शक्ति ले उनमुनि रहे,
ऐसा विचार मच्छंद्र कहै ।।५२

भावार्थ—हे योगी ! वाणी शून्य तक माया की हद है। विचार द्वारा साधना करने से नवग्रह का पाप और पुण्य द्वंद विलय होता है जैसे—

रवि, मंगल, शनि प्रवर्तक पिङ्गला नाड़ी, सूर्य स्वर तमोगुण रुद्र ध्यान में कर्मों का विलय। सोम, बुध-स्वरूप इडा नाड़ी चंद्र स्वर रजोगुण प्रधान ब्रह्मा-विधान स्थापन शांति साधन। गुरु, शुक्र प्रणव सुषुमना सम स्वर सतोगुण विष्णु प्रधान सात्विक स्थापना धारणा मय ध्यान से नवग्रह जनित पाप-पुण्य द्वैष-ताप निवृत्ति होती है। शिव-शक्ति

(सुरता-पवन) के मानस संगम को लेकर मुर्दा स्थाने उनमुन (समाधिस्थ) ध्यान में रहे।

गोरख उवाच (२७)

स्वामीजी ! कौणे घर कौणे बास,
कोणे गर्भ रह्या दश मास।
कौण मुखि पाणी कौण मुखिता खीर,
कौण दिशा उत्पत्ति भया शरीर ॥५३

भावार्थ—हे गुरु ! किस घर में किस का निवास है ? गर्भवास में दश माह कौण रहा ? किस मुख से पाणी भी खीर (दूध) के स्वाद में हो जाए तथा किस दिशा में शरीर की उत्पत्ति हुई है।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! अनिलु आतम बास,
आया गर्भ रह्या दश मास।
नाभि कंवल मुखि पाणी खीर,
वायुकार शनतपति भया शरीर ॥५४

भावार्थ—हे योगी ! अग्नि भवन स्थूल पिण्ड आत्मा ने निवास किया, कहीं अपने अहंता ममता करि संसार चक्र में जन्म मरण पाकर वासना से गर्भवास में आया। नाभी स्थाने नागनि मुख पलटने से मूर्द्धा-द्रवित जल ही दूध अमृत स्वरूप प्राप्त होता है। प्राण-वायु के स्तम्भ बंध से स्थूल शरीर की स्थिति है।

स्वामीजी कौणनाली होय शिवसंचरया, कौण मुख पैठा जीव।
कौण गर्भ वसंतड़ा, कौण नाली रस पीव ॥५५

भावार्थ—गोरखनाथजी मच्छन्द्रनाथजी से पूछते हैं कि हे गुरु! किस नाड़ी से कल्याण (शिव) तत्व की प्राप्ति होती है किस द्वार से जीवात्मा की स्थिति-वृत्त होती है। गर्भवास में किसने निवास लिया और किस द्वार से गर्भस्थ शिशु रस पीता है।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू! संखणी नाली होय शिव संचरया, सुषुमणि पैठा जीव।
माया गर्भ वसंतडा, बंकनाल रस पीव ॥५६

भावार्थ—हे शिष्य! कनपटी स्थाने दश नाड़ियों में से शंखणी नाड़ी द्वारा कल्याण (समाधि तत्व) की प्राप्ति होती है, सुषुमना नाड़ी से जीव ने शरीर में प्रवेश लिया और मेरी तेरी ममत्व वृत्ति रूप मायाध्यास ने गर्भ में निवास लिया। युक्त त्रिवेणी सनाल मुक्त बकनाल द्वारा पोषण रस पीता है।

गोरख उवाच (२६)

स्वामीजी कौण शून्य उतपन्ना आई,
कौण शुनि संतगुरु सु बुझाई।
कौण शुनि में रह्या समाय,
ए तत गुरु कहो समझाय ॥५७

भावार्थ—हे गुरु! किस शून्य में उत्पत्ति हुई? किस शून्य

का ज्ञान सतगुरु ने समझाया ? किस शून्य में उलट कर समाया ? इस तत्व को समझा कर कहो

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! सहज उत्पन्न आई,

समि सुरत सतगुरु सु बुझाई ।

अतीत शुनि में रह्या समाय;

परम तत कहूँ समझाय ॥५८

भावार्थ—हे शिष्य ! स्वाभाविक क्रिया शून्य से कर्म क्षेत्र से उत्पत्ति, समता शून्य वृति का दृढ़ात्म ज्ञान सतगुरु ने समझाया पंचभूतात्मा का साक्ष्य महाशून्य में परिवर्तन समाय रहे, यही परम तत्व समझाकर कहता हूं ।

गोरख उवाच (३०)

स्वामीजी ! कौण मुख लागे समाधि,

कोण मुख छूटे उपाधि ।

कोण मुख जु तुरिया बंध,

कौण मुख अजरावर कंध ॥५९

भावार्थ—हे गुरु ! किस वस्तु के अन्तर्हित होने से समाधि लगती है ? किस अंतरहित से प्रपन्चोपाधि से निवृत्ति होती है ? किस अन्तर्हित से साक्षी तुरीय बंध की सिद्धि होती है ? किस अन्तर्हित से अजर-अमृत बिन्दू की प्राप्ति होती है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! मन मुखी वाला लागे समाधि,

पवन मुख बाला छूटे उपाधि ।

सुरति मुख बाला तुरिया बंध,
गुरु मुख बाला अजरावर कंध ।।६०

भावार्थ—हे शिष्य ! मन के अतति होने से समाधि लगती है, प्राण-वायु के अन्तर्हित होगे में प्रापंचिक माया उपाधि से निवृति होती है । अंतस्थ श्रवणेन्द्रिय वृत्ति सुरति के अंतरमुख होने से साक्ष्य-तुरीय बंध की सिद्धि तथा गुरुशब्द के अंतर्हित साधन से अजर-अमृत स्वादु की प्राप्ति होती है ।

गोरख उवाच (३१)

स्वामीजी ! कौण सोवे कौण जागे, कौण दशूं दिश धावे ।
कहां ते उठत पवना, कवन कंठ तालिका बजावे ।।६१

भावार्थ—हे गुरु ! इस शरीर में अष्ट पहरी कौन जागे, कौन सोचता है । कोन दशों दिशा में दौड़ता है ? प्राण-वायु कहां से ऊर्ध्वगामी होता है, और कण्ठ तालिका की ध्वनिक नाड़ियों को कौन बजाता है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! मन सोवे पवन जागे, कल्याण दशूं दिशि धावे ।
नाभि ते उठत पवना, हौठ कण्ठ तालिका बजावे ।।६२

भावार्थ—हे शिष्य ! सुषुप्तावस्था में मन ही अंतर्मुख संकल्प-विकल्प रहित होता है मानो सोता है । प्राण-वायु ही तीनों अवस्थाओं में जाग्रत रहता है । अंतस्थ कल्पना ही जाग्रत विश्व जीव चक्षु स्थानों होकर तथा स्वप्नावस्था में तैजस नामक जीव कण्ठस्थनो हिता नाम सूक्ष्म रोमसहस्राणु भाग में दौड़ती है । पवन नाभी से उर्ध्वगामी

होकर चलता है। भाषा-विज्ञान के सिद्धान्त से कण्ठ गत ध्वनि-तंत्रियों को होंठ ही चलने की यान्त्रिक गति प्रदान करता है।

गोरख उवाच (३२)

स्वामीजी ! कहां ते करे मन गुण घणा,
कहां ते मन करे आवागवणा।
कौण मुख चांदना कर करै,
का मुख काल निद्रा करे।।६३

भावार्थ—हे गुरु ! साधन को मन की स्थिति कहां पर रहने से बहुगुण करें ? मन का आवागमन कहां से होता है ? किस अंर्तहित से ज्योति स्वर चन्द्र का उदय होता है और किस अन्तर्हित काल की सुषुप्तावस्था होती है।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! हृदय ते करे मन गुण घणा,
नाभी ते पवन करे आवा गवणा।
आप मुख चांदना कर करै,
मन मुख काल निद्रा करे।।६४

भावार्थ—हे शिष्य ! अनाहत चक्र हृदह स्थान की साधना से मन वश होकर साधक का हित करता है। नाभी से प्राण ऊर्ध्व गामी पुनः अपने अर्ध स्थान को प्राप्त करता है। अन्तर्हित चंद्र स्वर अपने श्रम साध्य कसौटी से सुखानन्द तथा मन अंतर्मुख निश्चय से काल का दमन होता है।

गोरख उवाच (३३)

स्वामीजी ! कौन ज्योति ते पवना पलटे,
कौन शून्य ते बाचा फुरे ।
कौन शून्य ते त्रिभुवन सार,
कौन शुनि ते उतरिया पार ॥६५

भावार्थ—किस शून्य की ज्योति दर्शन कर पवन-प्राण पलटे ? किस शून्य से वाणी का संस्फुर होता है ? किस शून्य से तीनों लोकों का सार तत्व उद्‌बोधन होता है ? किस शून्य से पार उतरना है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! उग्र शून्य ते ज्योति पलटे,
अभय शून्य ते बाचा फुरे ।
परम शून्य ते त्रिभुवन सार,
अतीत शून्य उतरिया पार ॥६६

भावार्थ—हे शिष्य ! उग्र शून्य से ज्योति पलट कर त्रिकुटी में साधक को दर्शन होते हैं, अभय शून्य से वाणी का उपादान कारण बनता है, परम शून्य ही तीनों लोकों का आवास उत्पत्ति द्वार है, अतीत शून्य (भयावह-दृश्य) से पार उभरना है ।

गोरख उवाच (३४)

स्वामी ! कहां ते उतपन्नी बुध्या, कहां ते उत्पन्ना अहार ।
कहां ते उत्पन्नो निद्रा, कहां ते उत्पन्ना काल ॥६७

भावार्थ—हे गुरु! बुद्धि का जन्म कहां से, भोजनवृत्ति (क्षुधा तृप्ति) युक्ति का जन्म कहां से हुआ ?श य्याकाले निद्रा का जन्म कहां से होता है और काल (मृत्यु यम) का जन्म कहां से होता है।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! मनसा ते उतपन्नी बुध्या, बुध्या ते उतपन्ना अहार।
अहार ते उत्पन्नी निद्रा, निद्रा ते उत्पन्ना काल ॥६८

भावार्थ—हे साधक! मन को विवेक वृति से बुद्धि का, बुद्धि की आवश्यकता पूर्ति बुद्धि पूर्ण खोज से आविष्कृत भोजन (क्षुधा निवृति) का जन्म हुआ। भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चौष्यादि चतुर्विध भोजन से निद्रा (स्वप्न-सुषुप्ति) अवस्था की उत्पति और निद्रालस्य से काल (मृत्यु जनक प्रवृति) का जन्म होता है।

गोरख उवाच (३५)

स्वामीजी। दिव्य दृष्टि किम होइबा, किम होईबा ज्ञान विज्ञान
गुरु शिष्य काया कै रहे, किसा उतरबा पारं ॥६९

भावार्थ—हे गुरु! देवदृष्टि कैसे प्राप्त होती है? परमेश्वर का विज्ञान-ज्ञान कैसे प्राप्त होता है और गुरु-शिष्य के शरीर कितने रूप में रहे? भव-सागर से पार कैसे उतरना होता है?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! दृष्टि ते दिव्य दृष्टि होइबा,
ज्ञान ते होय विज्ञान।

गुरु-शिष्य की एको काया,

पार चाहौ तो बहौर न जाया ।।७०

भावार्थ—हे शिष्य ! त्राटक दृष्टिभेदन की साधना से दूर-दर्शिता या पारदर्शिता की दिव्य दृष्टि होती है, अध्यात्म ज्ञान से ईश-विज्ञान तथा भौतिक विज्ञान का बोध होता है, गुरु और शिष्य का भौतिक शरीर दो है किन्तु शब्द-आत्मा एक है और भव सिंधु पार होने की बहुरि जन्ममूल अज्ञात मूल वासना को करना चाहिये।

गोरख उवाच (३६)

स्वामीजी ! कहां ते उठत श्वास उश्वास,

कहां परम हंस का वास ।

कैसे मनवा निश्चल रहे,

सतगुरु होय सो पूछ्यां कहे ।।७१

भावार्थ—हे गुरु ! स्वासोंश्वास कहां से उठता है ? जीवात्मा का निवास कहां है ? मन स्थिर कैसे होता है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! अरध ते ऊठत श्वास उश्वास,

ऊरधे परम हंस का बास ।

सहज स्थान मनवा निश्चल रहै,

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहै ।।७२

भावार्थ—हे साधक ! नाभी स्थान से श्वास उठता है, दशवें द्वार ब्रह्मरंध्र से जीवात्मा का आवास हैं। साधना से मन स्थित-एकान्त रहता है।

गोरख उवाच (३७)

स्वामीजी ! कैसे आवे कैसे जाय,

कैसे जोया रहे समाय।

कैसे तन मन सदा थिर रहे,

सतगुरु होय सो पूछ्यां कहै ।।७३

भावार्थ - प्राणात्मा शरीर में कैसे आता है, कैसे जाता है ? शरीर निधन पर जीव कहां समा जाता है ? मन तथा सूक्ष्म शरीर सामग्री कहां स्थिर रहती है ? गोरखनाथजी अपने गुरु से प्रश्न करते हैं।

श्री मच्छेन्द्र उवाच

अवधू ! शून्य आवे शून्य ही जाय,

शुन हो जोया रहे समाय ।

सहज शुन तन मन सदा थिर रहे,

ऐसा विचार मच्छेन्द्र कहे ।।७४

भावार्थ—हे साधु ! अणु परमाणु शून्य ही आती जाती हैं और तत्व-अंश सामग्री सुक्ष्माणु शून में ही समानती है। साधना काल कर्मयोग में तन मन स्थिर आयु तथा प्राणान्ते भौतिक प्राकृतिक मर्यादा को स्वाभाविक स्थिति में रहती है।

गोरख उवाच (३८)

स्वामीजी ! कहां बसे शक्ति कहां बसे शीव

कहां बसे प्राण, कहाँ बसे जीव ।

कहां होई इनका परचा लहै,
सतगुरु होय सो पूछ्यां कहै ॥६५

भावार्थ—हे भगवान! प्राकृतिक भूगोल खगोल में तथा शरीर में प्रकृति-शक्ति, जीवात्मा-शंकर का कहां निवास है? प्राण और जीव कहां रहते हैं? इन सबका संयोग कहां पर, कसे होता है? यह समझाकर कहिये।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू! अरध बसे शक्ति ऊरध बसे शीव,
भीतर बसे प्राण अंतरिक्ष बसे जीव।
निरन्तर होय इनका परचा लहै,
ऐसा विचार मच्छन्द्र कहै ।७६

भावार्थ—पृथ्वी-नाभी तल पर प्रकृति-शक्ति बसती है? ऊपर गगन-अम्बर में कल्याण तत्व का वास है? ब्रह्माण्ड-पिंड क्रिया चालक प्राण भीतर रहता है और जो शून्य-मण्डल में रहे वही जीव हैं। प्रलय-काल अथवा साधना-काल में इनका संयोग होता है।

गोरख उवाच (३६)

स्वामीजी! कैसे बैठे कैसे चाले,
कैसे बोले कैसे मिले।
कोण सुरत में निर्भय रहे।
सतगुरु होय सो पूछ्यां कहे ॥७७

भावार्थ—हे गुरु! साधक को साधना पथ में उठना, बैठना

और बोलना, मिलना, चलना तथा निर्भय कैसे रहना चाहिये ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! सुरत मख बैठे सुरत मुख चाले,
सुरत मुख बोले सुरत मुख मिले ।
निरति सुरति में निर्भय रहें,
ऐसा विचार मच्छन्द्र कहै ।।७८

भावार्थ—हे शिष्य ! साधक को पथ में महान सावधानी से सदैव साधनोन्मुख तत्पर रहना, चलना, उठना, मिलना, बैठना आदि क्रिया करते हुए पूर्णत:-अन्तर्मुखी निर्भयता में रहना चाहिये ।

गोरख उवाच (४०)

स्वामीजी ! कोण है शब्द कोण है सुरति,
कोण से बंध्यो काया से निरति ।
ई बंध्या मिटो कैसे रहै,
सतगुरु होय सो पूछ्यां कहै ।।७९

भावार्थ—हे गुरु ! शब्द कौन है, सुरति क्या है ? शरीर के बंध क्या है ? और यह बंधन कैसे मिटे ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! शब्द अनाहद सुरति सुरुचि,
निरति निरालंब लागे बंध ।

कूडध्या मिटे सहज में रहे,

ऐसा विचार मच्छंद्र कहे ।।८०

भावार्थ—हे शिष्य, शब्द सीमा-आकार रहित है, श्रेष्ठ साधन प्रवृत्ति मुमुक्ष-वृत्ति ही सुरति है। अन्तर्मुख वृत्ति आशा ही शरीर और जीव का जड़-चेतन बंध है। बहिरङ्ग विषय भोगिणी इच्छाओं आशाओं को बांध कर मांधना साधना में लगा रहे तो जीव के बंध निवृत्त होकर मुक्त स्वरूप स्थित रहे।

गोरख उवाच (४१)

स्वामीजी ! कौण सु आसन कौण सुजान

किहि विधि बाला धारे ध्यान

कैसे अवगति का सुख लहे

सतगुरु होय सो बूझ्या कहै ।।८१

भावार्थ—हे गुरु ! किस आसन से कैसा ज्ञान ले, साधक किस प्रकार ध्यान धरे। परमानन्द की प्राप्ति कैसे होय ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! संतोष सु आसन सुविचार सुज्ञान

काया करि धरिबा ध्यान

गुरु मुख अवगति का सुख लहै;

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहै ।।८२

भावार्थ—हे साधक ! संतोष का आसन, विशेष-ज्ञान, शरीर से आसन। प्रत्याहारादि साधना सहित ध्यान करे और गुरु उपदेश निष्ठा से परमानन्द की प्राप्ति होती है।

गोरख उवाच (४२)

स्वामीजी ! कौण संतोष को कौण विचार;

कौण सु ध्यान काया के पार ।

कैसे मनवा इनमें रहे;

सतगुरु होय सो बूझयां कहे ।।८३

भावार्थ—हे गुरु ! संतोष कैसा विचार कैसा ? शरीर से पार ध्यान कैसा ? इनमें मन कैसे रहे ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! निरभै संतोष अनुभै विचार;

दशों में ध्यान काया के पार ।

गुरु मुख मनवा इनमें रहे;

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहे ।।८४

भावार्थ—हे शिष्य ! निर्भय संतोष, अनुभव विचार और ब्रह्मरन्ध्र (दशवें) द्वार का ध्यान काया के पार का है । गुरुमुखी सुगरा शिष्य मन इन में अन्तर्हित रहता है ।

गोरख उवाच (४३)

स्वामीजी ! कौण पांव बिन मारग;

कौण चक्षु बिन दृष्टि ।

कौण कर्ण बिन श्रवण;

कौण मुखः बिन शब्द ।।८५

कौन है ? जैसे—पांव बिना मार्ग, नैत्र बिना दृष्टि, कानों के बिना सुनना और मुख के बिना बोलना।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! विचार पांव बिन मारग, निरति चक्षु बिन दृष्टि।
सुरति करण बिन श्रवण लौ मुख बिन शब्द ॥८६

भावार्थ—हे शिष्य ! विचार मार्ग पांव बिना है, अन्तस्थ ज्योति चक्षु बिना है। अंतर्नाद-मध्ये गूंज सुनने की क्रिया कानों बिना है। अन्तःकरण की लौ ही बिना मुख के शब्द है।

गोरख उवाच (४४)

स्वामीजी ! कौण धोवता कौण आचार,
कौण जाप मन तजे विकार।
कौण भाव में निरभय रहे,
सतगुरु होय सो पूछ्यां कहे ॥८७

भावार्थ—हे गुरु ! अंतस्थ मल को कौन धोता है ? आचार कौण है ? किस जप से मन की शुद्धि होती है ? किस भाव से निर्भय रहे।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! ध्यान धोवता विचार आचार,
अजपा जाप मन तजे विकार।
अनुभव भाव में निरभय रहै,
ऐसा विचार मच्छन्द्र कहै ॥८८

भावार्थ—हे शिष्य ! मन विक्षेपादि अंतस्थ दोषों को निरावर्ण कर्त्ता ध्यान है, विचार ही उत्तम आचार-संहिता है।

मानस (सुरति स्वाहा एवं मन से एकीकरण से किया गया) जप ही मन को शुद्ध करता है। अनुभव स्थिति में निर्भय रहना चाहिये।

गोरख उवाच (४५)

स्वामीजी! कौण स बोऊं कौण स आप,
कौण स माई कौण स बाप।
कैसे मन में दरिया रहै,
सतगुरु होय सो बूझ्यां कहै ॥८९

भावार्थ—हे गुरु! ओ३म्कार कौन है? आप कौन हैं, माता कौन हैं? पिता कौन है? मन में सदैव शीतलता समुद्र सम्पूर्ण भरा कब रहे?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू! शब्द बोऊं ज्योति स आप,
शुन्य स माई चेतन बाप।
निश्चल मन में दरिया रहे,
ऐस विचार मच्छेन्द्र कहे ॥९०

भावार्थ—हे अवधू! शब्द ही ॐ है, ज्योति स्वयं अपना स्वरूप है। शून्य मय प्रकृति को सब ही माता है, चेतन सता ही पिता है। मन का ध्येयाकार निश्चय बनने से शीतल-सिंधु पूर्ण रहता है।

गोरख उवाच (४६)

स्वामीजी! कौण छै चेतन कौण छै सार,
कौण छै उत्पत्ति कौण छै काल।

कौण माँहि पंच तंत जरि रहे;

सतगुरु होय सो पूछ्यां कहे ॥९१

भावार्थ—हे गुरु ! चेतन कौन है ? सार तत्व क्या है ? उत्पत्ति क्या है ? काल (विनाश) क्या है ? पंच तत किस में विलय होकर रहते है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू, ज्योति छै चेतन निर्भय सार,

जागिवा उत्पत्ति निद्रा काल।

ज्योति में पंच तंत जरि रहै,

ऐसा विचार मच्छेन्द्र कहै ॥९२

भावार्थ—हे योगी ! ज्योति चेतन है, निर्भय तत्व सार है। जाग्रत काल उत्पत्ति है, निद्रा-सुप्त काल ही मृत्यु (विनाश) है। ज्योति (चेतन) में पांचों तंतों का विलय होता है।

गोरख उवाच (४७)

स्वामी, कोण बोले कोण सोवे,

कोण रूप में आपा जुग जोवे।

कोण रूप में जुग रहे,

सतगुरु होय सो बूझ्यां कहै ॥९३

भावार्थ—हे गुरु ! सोता कौन ? जागता कौन ? अपना स्वरूप कहां देखे ! किस स्वरूप में युगान्तर-काल तक अटल रहे।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! शब्द बोले शक्ति सोवे,
अदेख रूप में आपा जोवे ।
अरूप रूप में जुग जुग रहे,
ऐसा विचार मच्छंद्र कहे ॥६४

भावार्थ—हे साधु ! शब्द जाग्रत है, शक्ति सुप्त है, अदृष्ट अमुष्ट स्वरूप में आपको ज्ञान मार्ग से समदृष्टि से देखें और अटल, रूप वर्ण रहित युगान्तर काल तक स्थिर रहता है ।

गोरख उवाच (४८)

स्वामीजी ! कौण मुख रहणा कौण मुख ध्यान ?
कौण मुख अभिरस कौण मुख पान ?
कौण मुख छेदी देही रहे,
सतगुरु होय सो बूझयां कहै ॥६५

भावार्थ—हे भगवान् ! किसके सन्मुख रहना, किसके सन्मुख ध्यान, अमृत, प्राप्ति, पीना तथा किस सन्मुखता को छेदने से शरीर रहे सो कहिये ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! सहज मुख रहना, भक्ति मुख ध्यान
गुरु मुख अमीरस चित्त मुख पान ।
आशा मुख छेदिवा देहि रहे,
ऐसा विचार मच्छंदर कहे ॥६६

भावार्थ—हे शिष्य ! साधना के सन्मुख रहणा, भक्ति (उपासना) के सन्मुख रहकर ध्यान करना। गुरु के सन्मुख से ज्ञान अमृत चेतन (सावधान) सन्मुख रहकर पीना और आशा मुख के दर्शन करके अमर रहिये।

गोरख उवाच (४६)

स्वामीजी ! कौण मुख आवे, कौण मुख जाय,
कौण मुख होय काल को खाय।
कौण मुख होय जाति में रहे,
सतगुरु होय सो बूझ्यां कहे ॥६७

भावार्थ—हे गुरु ! किसके सम्मुख आवे, जावे और काल को खावे, ज्योति में समाया रहे।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! सहज मुख होय आवे,
सहज मुख होय सो जाय,
निरपख होय काल कूं खाय।
निरास मुख होय ज्योति रहे;
ऐसा विचार मच्छन्द्र कहे ॥६८

भावार्थ—हे साधु ! साधना सन्मुख आवे जावे बहिरंग क्रिया तथा प्राणायाम क्रिया भेद में साधन सन्मुख निरपक्ष होकर मृत्यु का अपधन करे और निराशा सन्मुख होय ज्योती (चेतन) में समाय रहे।

गोरख उवाच (५०)

स्वामीजी ! कौण है काया कौण है प्राण,

कौण पुरुष का धरिए ध्यान ।

कौण स्थान मन काल सूं दूरि रहे,

सतगुरु होय सो बूझ्यां कहे ॥९९

भावार्थ—हे गुरु ! वस्तुतः शरीर कौन है ? प्राण कौन है ? किस पुरुष का ध्यान करना चाहिये ? किस स्थान पर मन मृत्यु भय से दूर रहता है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! मन है काया पवन है प्राण,

परम पुरुष का धरिए ध्यान ।

सहज स्थान मन काल सूं दूरि रहे,

ऐसा विचार मच्छेन्द्र कहे ॥१००

भावार्थ—हे शिष्य ! मनोमय सृष्टि साधक के प्रयाण में मन ही शरीर हैं और प्राण पवन है, परमात्मा का ध्यान करना चाहिये । साधन स्थान स्थिति मन मृत्यु-अवधान से दूर रहता है ।

गोरख उवाच (५१)

स्वामीजी ! कौण है कूंची कौण है ताला,

कौण है बूढ़ा कौण है बाला ।

कौण स्थान मन उनमुनि रहै,

सतगुरु होय सो बूझ्यां कहै ॥१०१

भावार्थ—हे गुरु! ताला, कूंची कौन है? कौन बूढ़ा कौन बालक है? किस स्थान पर मन ध्येयाकार आनन्दमय रहता है?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू! शब्द ही कूंची शब्द ही ताला,
अचेतन बूढ़ा चेतन बाला।
ज्ञान स्थान मन उनमुनि रहै,
ऐसा विचार मच्छेन्द्र कहे ॥१०२

भावार्थ—हे शिष्य! शब्द मय बन्धन (ताला) को निवृति शब्द वेद वाक्य ही चाबी है, जर है सोई वृद्ध है, चेतन ही बालक है। ज्ञान-भूमिकारूढ़ मन ही आनन्दमय रहता है।

गोरख उवाच (२५)

स्वामीजी! कौण समाधि कौण है सिद्ध,
कौण समाया कौण है रिद्ध।
कैसे मन की भ्रांति नशाय,
सतगुरु स्याम कहो समझाय ॥१०३

भावार्थ—हे गुरु! समाधि क्या है? सिद्ध कौण है? कौन समाया है? कौन अक्षय रिद्ध है? मन की भ्रांति कैसे निवृत्ति हो?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू! सुरत समाधि शब्द सु सिद्ध,
आप समाया परा है रिद्ध।

दशों के मेटे भ्रांति नशाय,

ऐसा वचन कहे गुरु राय ॥१०४

भावार्थ – मच्छन्द्रनाथ जी कहते है कि हे गोरख ! अन्तर्वृति समाधि है, वेद-गुरु वाक्य शब्द स्वतः सिद्ध हैं। आप लय रूप है, वाणी रिद्धि स्वरूप है। पांच (कम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) बैरी तथा पांच क्लेश (अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश) इन देशों के निवृति से भ्रान्ति नामक संशय की निवृति होती है।

गोरख उवाच (५३)

स्वामीजी ! कौण है सांचा कौण से रंग,

कौण आभूषण चढ़े सुरंग।

तामें निश्चल कैसे रहै,

सतगुरु होय सो बूझ्यां कहै ॥१०५

भावार्थ—हे गुरु ! सांचा कौन है ? जिसमें ढलने वाला द्रव कौन है ? कैसा आभूषण है ? जिस पर सदैव रंग की कसौटी चढ़े।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! ज्ञान है सांचा प्राण सुरंग,

ज्योति आभूषण चढ़े सुरंग।

तामें निश्चल ऐसा रहे,

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहे ॥१०६

भावार्थ—हे अवधूत ! ज्ञान स्वरूप द्रवण (सांचे) में प्राण द्रव्य पदार्थ ढलता है तब साधक की त्राटक प्रोढ़ावस्था में

ज्योति के दर्शन होते हैं वही ज्योति अनमोल गहना है। जो कसौटी (परख) पर चढ़ने योग्य है उसमें निश्चय कर निश्चल होकर रहे।

गोरख उवाच (५४)

स्वामीजी ! कौण है मन्दिर कौण है देव,
कहां बैठ करि कीजे सेव।
कौण है पाती कैसे रहे,
सतगुरु सोई बूझयां कहे ॥१०७

भावार्थ—हे गुरु ! साधक के लिये कौनसा मंदिर है ? कौनसा देव है ? कहां बैठकर सेवा करें, भेंट में क्या चढ़ावें ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! देही मन्दिर चेतन देव,
मन सरोवर बैठ निरंतरि सेव।
प्रेम पाती उनमुन रहे,
ऐसा विचार मच्छन्द्र कहे ॥१०८

भावार्थ—हे साधक ! श्रेष्ठ मंदिर शरीर है, इसमें निवासी चैतन्यात्मा ही श्रेष्ठ देवता हैं, मनन तालाब के किनारे बैठकर उपासना करनो चाहिये, प्रेम पुष्प-पत्ती चढ़ाकर आनन्द-मग्न रहना चाहिए।

गोरख उवाच (५५)

स्वामीजी ! कौण है मन्दिर कौण है देव,
कौण है मूरति कौण अपार।

कौण रूप में निर्भय रहै,

सतगुरु होय सो बूझयां कहे ॥१०९

भावार्थ—हे गुरु ! सिद्धावस्था में कौन मंदिर है ? कौन देवता ? कौन मूरति जो अपार है ? किसकी उपासना करके निरभय रहें ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! शुन है मंदिर शब्द है देव,

ज्योति है मूरति ज्वाला अपार ।

अरूप रूप में उनमुनि रहे,

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहे ॥११०

भावार्थ—हे शिष्य ! सिद्धावस्था में शून्य ही विशाल मंदिर है, ओउंकार शब्द ही धार्मिक देवता हैं । त्राटक साध्य ज्योति ही साक्षात दृश्य मूर्ति तथा अपार तेजस्वी है, माया उपाधि का रूप स्थूल रहित आत्म में निर्भय रहना होता है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

स्वामीजी ! कौण है दीवा कौण प्रकाश,

कौण है बाती तेल निवास ।

कैसे दीवा इन में रहे,

सतगुरु होय सो बूझयां कहे ॥१११

भावार्थ—हे गुरु ! दीपक कौन है ? प्रकाश कैसा है ? बाती क्या है ? तेल क्या है ? इनके होते भी दीपक अटल कैसे रहे ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! ज्ञान हैं दीव शब्द प्रकाश,
संतोष तेल प्रेम निवास ।
दुविधा मेखि अखण्डित रहै,
ऐसा विचार मच्छंद्र कहै ॥११२

भावार्थ—हे शिष्य ! ज्ञान दीपक का शाब्दिक प्रकाश, संतोष तेल में प्रेम की धारा बाती लगी रहे । दुविधा (द्वंद) को वायु से वंचित करके लौ को अखंडित रखें ।

गोरख उवाच (५७)

स्वामीजी ! कौण बैठा कोण चल्या,
कोण फिरया कोन मिल्या ।
कोण घर में निरभय रहै,
सतगुरु होय सो बूझ्यां कहैं ॥११३

भावार्थ—हे गुरु ! साधक अवस्था में क्या बैठा ? क्या चल्या ? क्या फिरया, क्या मिल्या और घर में निर्भय रहे ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! बैठा धीरज चल्या विकार,
सुरति सु फिरचा जिल्या सु सार
सदा अतीत घट निर्भय रहै,
ऐसा विचार मच्छंद्र कहै ॥११४

भावार्थ—हे योगी ! धैर्य बैठा हैं, विकार चले गये अंतर्दृष्टि सुरति से चौदह लोकों के पिण्ड-ब्रह्माण्ड ज्ञान का विचार करना ही फिरना है जिस से तत्व ज्ञान रमभ मिली और सबसे एकांत (अतीत) होकर निर्भय रहना ।

गोरख उवाच (५८)

स्वामीजी ! कौण जोगी कैसे रहे,
कौण भोग कैसे लहै ।
सुख में कैसे ऊपजे पार,
सता में कौण बंधावे धार ।११५।

भावार्थ—हे गुरू ? वस्तुतः योगी कौन है ? कैसे रहता है ? कैसा भोग कैसे भोगता है ? कैसे सुख पाता है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू मन जोगी जो उनमुन रहै,
उपजे महारस शब्द सु लहै ।
रस ही मांही अखण्डित पार,
सतगुरु शब्द बंधावे धार ।११६

भावार्थ—हे शिष्य ! मन रुपी जोगी ध्येयस्त मौन में रहता है, मूर्द्धा ध्यान के महारस शब्द-अनहद बाजा सुनकर अखंडित आनन्द में रहता हैं, ऐसा परमानन्द साधन युक्ति द्वारा सतगुरू ही दरशाते हैं ।

गोरख उवाच (५९)

स्वामी ! कौण आत्मा आवे जाय,
कौण आत्मा शुन्य समाय ।

कौण आत्मा त्रिभुवन प्यार,

कौण का परचा बावन बार ॥११७

भावार्थ—हे गुरु ! आने जाने वाली आत्मा कौनसी है शुन्य-विभु में विलय होने वाली आत्मा कौनसी है ? तीनों लो का प्रेम रस लेने वाली कौनसी आत्मा है ? किस को शि साधना बावन (अनेकों) बार प्रदर्शित होती है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! पवन आतमा आवे जाय,

मन आत्मा शुन्य समाय ।

ज्ञान आत्मा त्रिभुवन प्यार,

गुरु का परचा बावन बार ॥११८

भावार्थ—हे शिस्य ! वायु में अंश प्राणात्मा आती जाती मनशील आत्मा शून्य में बिलय हो जाती है । विशेष अध्या ज्ञान आतमा तीनों लोक में व्यापक रस है । गुरु की महिमा-श ही बारम्बार उद्यत रहती है ।

गोरख उवाच (६०)

स्वामीजी ? मन का कौण जीव,

जीव का कौण में बास ।

बे श्वास का कौण आधार,

कहो आधार का कौण रूप ॥११९

भावार्थ—हे गुरु ! मन का चैतन्य कौन है, उस जीव निवास कहां है ? उस निवास का आवास आधार क्या है औ उस आधार का स्वरूप क्या है ?

श्री मछन्द्र उवाच

अवधू ! मन का पवन जीव,
पवन का शुन्य में बास ।
शुन्य का ब्रह्म आधार है,
ब्रह्म का अचित रूप ।१२०।

भावार्थ—हे शिष्य ! मन का जीव (शक्ति) प्राण है, प्राण का शुन्याकाश में निवास है शुन्य का आधार ब्रह्म है ब्रह्म का स्वरूप अचिन्तनीय है ।

गोरख उवाच (६१)

स्वामीजी ? कौरग चक्र शिर के कंध,
कौरग चक्र अगोचर बंध ।
कौरग चक्र में हंस निरोधे ।
कौरग चक्र में मन परमोधे ।
कौरग चक्र में काल है सबाधि,
कौरग चक्र में लगे समाधि ।।२२२

भावार्थ—हे गुरु ! किस चक्र की साधना से कुंडलिनी-शक्ति की जागृति होती है ? किस चक्र से तीनों योगिक क्रिया बंध सिद्धि होती है ? किस चक्र में प्राण-हंस अवरुद्ध होती है ? किस चक्र में मन की शिक्षा मिलती है ? किस चक्र में काल गति रुकती है ? किस चक्र में समाधि की परिपक्व धारणा बनती है ?

श्री मछन्द्र उवाच

अवधू ? मूले चक्र थिरके कंध,
गुगो चक्र अगोचर बंध ।
मणि चक्र में हंस निरोधे,
अनाहद चक्र में मन परमौधे ।२२२।
मिशुद्ध चक्र में काल समाधि,
चन्द्र चक्र में लगे सबाधि, ।
ए षट् चक्र का जाणे भेव,
सो आपहि करता आपहि देव ।२२३।
पवन पवना साधंते योगी,
जरा पलटे काया हा निरोगी ।
साधो अवधू योग कला,
निश्चय साधे होये भला ।२२४।

भावार्थ—हे शिष्य ! मूलाधार चक्र से नागिन जाग्रत होती है मूलबन्ध से ही मूल, जालन्धर, उड़ियान बंध की सिद्धि होती है तथा मणिपुर चक्र से प्राण वायु वश होती है अनाहद चक्र से मन को शिक्षा, विशुद्ध चक्र में जराव्याधि मृत्यु भय निवारण होकर चन्द्र चक्र में समाधि धारण होती है । इन षट चक्रों का भेद पहिचानने साधने वाला योगी अद्वैत निष्ठ मुक्तात्मा होता है शरीर के रहते आरोग्य, अवृद्ध सबल रहे ।

।। इति गुरु-शिष्य शका समाधान समाप्त ।।

अथ गोरख दत्तात्रेय संवाद अंग

गोरख उवाच [१]

स्वामीजी तुम ब्रह्मा कि ब्रह्मचारी,

तुम बान पुस्तक कि दण्डधारी।

तुम जोगी कि जोग जुगता,

कौण प्रसादे रमो स्वच्छंद भुगता ॥१

भावार्थ—हे भगवान ! आप गृहस्थ हो या ब्रह्मचारी, ग्रंथ धारक वानप्रस्थ या सन्यासी कौन है ? सिद्ध योगी है ? अथवा साधना प्रवेशी साधक ? आप किसी की कृपा से मुक्त-स्वतन्त्र विचरण करते हो ?

श्री दत्त उवाचा

अवधू ! न हम ब्रह्म न हम ब्रह्मचारी,

न हम वान पुस्तक ना दण्डधारी।

हम जोगी न जोग जुगता,

आप प्रसादे रमो स्वच्छंद भुगता।२।

भवार्थ—हे साधु ! ब्रह्मचर्य ग्रहस्थ, वानप्रस्थ सन्यास इन चारों आश्रमों से रहित सिद्धि सिद्ध, साधक भी नहीं। मैं स्वयं अपनी कृपा स्वतन्त्र मुक्त हूं।

गोरख उवाचा [२]

स्वामीजी ! आपा मेटणा सतगुरु थापणा,

अण परचे जग खाया।

गोरख कहै सुणो हो स्वामी,

तुम कौण पुरुष कहां से आया ।।३

भावार्थ - हे भगवान ! अहंकार रहित होकर सतगुरु शरण जाकर साधना करनी चाहिए। बिना साधना संसार नष्ट कर देगा। आप कौन है ? कहां से आए ?

श्री दत्त उवाच

अवधू ! हों हूं गुप्त गुप्त ते प्रकट,

रहता पुरुष की छाया ।

दत्त कहै सुणौ सत गोरख,

मैं गैब पुरुष गैब से आया ।।४

भावार्थ—हे साधू ! मैं गुप्त से गुप्त हूं प्रकट से प्रकट हूं। चैतन्य अनादि पुरुष की छाया (माया का प्रतीक) हुं और शुन्य पुरुष शुन्य से आया हूं।

गोरख उवाच [३]

स्वामीजी ? अजर बिंदु अगाध बाई,

अप्रबल विप्लव की माया ।

गोरख कहै सुणो हो स्वामी,

क्यूं शांति जल बिब की काया ।।५

भावार्थ—स्पष्ट हैं।

श्री दत्तात्रेय उवाच

अवधू ! ! कड्यो न बाई अप्रबली न माया,

आकार न निराकार सुषमो न काया ।

जलो न जल बिबोऽयनो न भाया,
दत्तो न गोरखो न काया न छाया ॥६

अर्थ स्पष्ट है—

गोरख उवाच ४.

स्वामी कौण जु आवे कौण जु जाय,
जा बोले सो कहां समाय ।
जो गम होय सो कहाए भेव,
गोरख भणे सुणो दत्तदेव ॥७

श्री दत्त उवाच

अवधू ! न कोई आवे न कोई जाय,
कांसा नाद मांहि समाय ।
एके सूत्र पोयो हार,
सांभल गोरख कहै विचार ॥८

गोरख ऊवाच ५.

स्वामीजी ! कौण है माता कौण पिता,
कौण गुरू उपदेश सिखाता ।
कौण सु आसन करऊं विश्राम,
सुण हो स्वामी आठों याम ॥९

श्री दत्त ऊवाच

अवधू ! धीरज मात संतोष पिता,
ज्ञान गुरू उपदेश सिखाता ।

अनिश आसण तहां विश्राम,
सांभल गोरख आठों याम ।१०।

गोरख उवाच ६.

स्वामीजी ! कौण है मुक्ता कौण हंस सहै,
कौण बिनसे कौन अजर रहै ।
जो गम होय सो कहिये भेव,
गोरख भाखे सुणो दत्तदेव ।११।

श्री दत्त उवाच

अवधू ! ब्रह्म मुक्ता प्रकृति सदृश सहै,
प्रकृति विनसे ब्रह्मा अजर रहै ।
गुप्त ज्ञान कथि गम अपार,
सुनले गोरख कहूं विचार ।१२।

गोरख उवाच ७.

स्वामीजी कौण है सूक्ष्म कौण है स्थूल,
कौण है डाला कौण है मूल ।
जो गम होय तो कहिये भेव,
गोरख भणे सुणो दत्तदेव ।१३।

श्री दत्त उवाच

अवधू ! ब्रह्म सूक्ष्म तत स्थूल,
पवन डाल है मन है मूल ।

गुह्य ज्ञान कथ लेहु अपार,
सुन ले गोरख कहूं बिचार ॥१४

गोरख उवाच ८.

स्वामीजी कौण गुरु है कौण चेला,
किहि विधि अनंत सिद्धो से मैला।
ब्रह्म कंवल का कहिये भेव,
गोरख भणे सुनो दत्तदेव ॥१५

श्री दत्त उवाच

अवधू परमातम गुरु आतम चेला,
सहज सुरत होय अनंत सिधों से मेला।
ब्रह्म कंवल उरध मुख खेला,
सांभल गोरख उनमुनि केला ॥१६

गोरख उवाच ९.

स्वामीजी कौण है उनमुन कौण है कला,
किस विध खूले त्रिकुटि ताला।
नाद बिंद का कहिये भेव,
गोरख भणे सुणो दत्तदेव ॥१७।

श्री दत्त ऊवाचा

अवधू उनमुन ध्यान पवन मुख कला,
नाद मुख खूले ताला ।

दशवें द्वारे बिन्दु का वास

सांभल गोरख नाद प्रकाश ।।१८

गोरख ऊवाचा १०.

स्वामीजी ! कौरण है कंटक कौरण उचाट,

किहि विधि खुले ब्रह्म कपाट ।

अगम पंथ का कहिये भेव,

गोरख भरणे सुरणो दत्त देव ।।१६।।

श्री दत्त ऊवाचा

अवधू ! कंटक सोई जिहि अचिन्तित क्रोध,

उचाट सोई आतम विरोध ।

गुरु मुख खुले ब्रह्म कपाट,

सांभल गोरख अजबा बाट ।।२०।।

गोरख ऊवाचा (११)

स्वामीजी कौरण है दया कौरण धररण,

कौरण है बूढरण कौण है तररण ।

कहा कर्म कहा ज्ञान को भेव,

गोखर भरणे सुरणो दत्तदेव ।।२१।।

श्री दत्त ऊवाचा

अवधू ! आतमा दया ध्यान है धररण,

संशय बूडरण ज्ञान है तररण ।

क्रिया जाल सोई है करम,
ज्ञान सोई बिवर्जित जो करम ।।२२

गोरख उवाच [२२]

स्वामीजी कौण है बंध्या कौण है मुगता ।
कौण है जोगी कौण है जुगता ।
देव कला का कहिये भेव,
गोरख भणे सुणो दत्तदेव ।।२३

श्री दत्त उवाच

अवधू ? बंध्या सोई करम ही बंध,
मुक्ता सोई रहे निरद्वंद ।
जोगी सोई जुगति मन रहे,
गोरख सुणो दत्त यूं कहे ।।२४

गोरख उवाच (१३)

स्वामीजी कौण है मुक्ति कौण है जोग,
कौण है काया लागे रोग ।
इनका हम सूं कहिये भेव,
गोरख भणे सुणो दत्तदेव ।।२५

श्री दत्त उवाच

अवधू मुक्ति सोई जो जुगति कर पाली,
जोग सोई जो विषय निराली ।

रोग सोई मन भ्रमत रहे,

गोरख सुणो दत्त यूं कहे ।२६।

गोरख उवाच १४.

स्वामीजी कौण है भ्रम कौन है धर्म,

कौन है निश्चय कौण है अधर्म ।

अगम ज्ञान का कहिये भेव,

गोरख भणे सुणो दत्तदेव ।२७।

श्री दत्त उवाच

अवधू भ्रम सोई जो व्यापे संशय

धर्म सोई दर्शन आ दिशय ।

निश्चल सो जो लौ मैं रहे,

अधर्म सोई जो मिथ्या कहे ।।२८

गोरख उवाच १५.

स्वामीजी कौण है मिथ्या कौण है सांचा,

कौण है सारा कौण हैं काचा ।

कौण कहे शब्द का भेव,

गोरख भणे सुणो दत्तदेव ।२९।

श्री दत उवाच

अवधू माया मिथ्या ब्रह्म है सांचा,

शब्द सु सारा पिन्ड जु काचा ।

शब्द विचार जहां मन रहे,
गोरख सुणो दत्त यूं कहै ।३०।

गोरख उवाच [१६]

स्वामीजी कौण है काया कौण है माया,
कौण भ्रम जग धंधे लाया ।
अपार धंधा का कहिये भेव,
गोरख भणे सुणो दत्तदेव ।३१।

श्री दत्त उवाच

अवधू अन कल्पंता लागी माया,
करम आचार तहां लौ काया ।
ज्ञान बिना जग धन्धे लाया,
सांभल गोरख भेद बताया ।३२।

गोरख उवाच (१७)

स्वामीजी कौण ज्ञान है कौण सु ध्यान,
कौण मन कोन है आसन ।
ज्ञान ध्यान का कहिये भेव,
गोरख भणे सुनो दत्तदेव ।३३।

श्री दत्त उवाच

अवधू ध्यान सोई ब्रह्म मूले है,
सोई ज्ञान सब गल लहै ।

मन सोई तहां मन ही समान,
आप सु जाने सोई आसान ।।३४

गोरख उवाच (१८)

स्वामीजी ज्ञान समान कौण है जान,
शशि हर सूर सब को आन ।
आप प्रकाश अगोचर भेव,
गोरख भणे सुणो दत्तदेव ।।३५

श्री दत्त उवाच

अवधू ! जाणे सो परचे है ज्ञान,
गुरु मुख लेता भेद पिछान ।
शशि हर सूर अगोचर वास,
सुण हो गोरख कहूं प्रकाश ।।३६

गोरख उवाच [१६]

स्वामीजी ! कौण अगोचर कौण प्रकाश,
कौण घर खेले आप निरास ।
कौण सिद्ध का कहिये भेव,
गोरख भणे सुणो दत्तदेव ।।३७

श्री दत्त उवाच

अवधू ब्रह्म अगोचर मन प्रकाश,
परचे घर खेले आप निरास ।

परम ज्योति तहां सिद्ध गम रहै,
गोरख सुणे दत्त यूं कहे ॥३८॥

गोरख उवाच २०.

स्वामीजी ! कौण है परचो कौण है प्रतीत,
कैसे अस्थिर चंचल चित्त ।
मन पवना का कहिये भेव,
गोरख भणे सुणो दत्तदेव ॥३९॥

श्री दत्त उवाच

अवधू गुरु परचे तो मन परतीत,
निश्चय स्थिर चंचल चित्त ।
पवन स्थिर ता मन थिर रहै,
गोरख सुणे दत्त यूं कहे ॥४०॥

गौरख उवाच २१.

स्वामीजी कौण निश्चय ले बंधे बंध,
जरा मरण अजरावर कंध ।
गगन पद का कहिये भेव,
गोरख भणे सुणो दत्तदेव ॥४१॥

श्री दत्त उवाच

अवधू निश्चय ले सो जौन पड़े काया,
त्रिगुण रहे तमो गगन समाया ।

सहज पद परम निरवाण,

सांभल गोरख ए परमाण ।४२।

गोरख उवाच [२२]

स्वामीजी कौण शक्ति है कौण शिव,

कौण तीन भुवन का जीव ।

कौण है आशा पूरा भेव,

गोरख भणे सुणो दत्तदेव ।४३।

श्री दत्त उवाच

अवधू शक्ति सोई जो सब ही सोवे,

शिव सोई सबही को पोवे ।

जीव सोई तीन भुवन का नाथ,

सोई संगी सो पुरवे आस ।४४।

गोरख ऊवाचा (२३)

स्वामीजी कोण तत्व ले कथिबा ज्ञान ।

कौण तत्व ले धरिबा ध्यान ।

कौण समाधि तुम लागे भेव,

गोरख भणे सुणो दत्तदेव ।४५।

श्री दत्त उवाच

अवधू आतम चिन्ह ने कथिवा ज्ञान,

तत्व विचारिबा धरिबा ध्यान ।

दत्त कहे हम सहज समान

सांभल गोरख पद निरवान ।४६।

गोरख उवाच (२४)

स्वामी जी कौण तत्व तुम रहो समाय,

कौण तत्व तुम मध्ये आय ।

कौण परचे तुम कहते भेव,

गोरख भणे सुणो दत्तदेव ।४७।

श्री दत्त उवाच

अवधू ज्ञान तत्व में रहूं समाय,

चैतन तत्व मो में आय ।

त्रिगुण परचे गुरु गम कोई,

निश्चय धर्म ज्ञान गम सोई ।४८।

गोरख उवाच (२५)

स्वामीजी तुमेव दत्त तुमेव देव,

आदि मध्य तुम जाणो भेव ।

तुम नारायण तुम कृपाल,

तुम हो सकल विश्व के पाल ।।४९।।

श्री दत्त उवाच

अवधू तुम हो गोरख तुम रक्षपाल,

अनन्त सिद्धों में तुम भूपाल ।

तुम ही शंभूनाथ निवारण,
प्रणवे दत्त गोरख प्रणाम ।।५०।।

गोरख उवाच (२६)

स्वामीजी दरशन तुम्हारा देव,
आदि अन्त मध्य पाया भेव ।
गोरख भणे दत्त प्रणाम,
भोग योग में परम निधान ।।५१।।

।। इति दत्त-गोरख संवाद ज्ञान प्रदीप समाप्तः ।।

अथ गोरख-गणेश गोष्ठी-संवाद

स्वामीजी तुम कहां से आये, कहा तुम्हारा नाम ।
अवधू निरंतरि ते आये, योगी हमारा नाम ।।
स्वामीजी जोगी तो बोलाए, जिन अनेक महरम खेल रचाए ।
ब्रह्मण्ड रचाया, तुम्हे तो कौण जोगी दरशाया ।
अवधू मैं निरंजन जोगी, शब्द अतीत ना चेला मैं सौ योगी ।
स्वामीजी निरंजन योगी, शब्द अतीत ना चेला ।
कैसे करि जाणिये, कैसे करि प्रमाणिये ।।
अवधू रहित करि जाणिये, ए शब्द करि प्रवाणिये ।
स्वामीजी रहित ते का बोलिये, शब्द ते का बोलिये ।
अवधू रहित त्रिगुण रहत बोलिये,
शब्द ते बोलिये सर्व ते विवर्जित ।

स्वामीजी सर्व ते विर्वाजित ते का बोलिए ?

त्रिगुण रहित ते का बोलिए ।

अवधू सर्व ते विर्वाजित सूक्ष्म त्रिगुण बोलिए,

सत्व, रज, तम ।

स्वामीजी सूक्ष्म ते का बोलिए,

सत, रज, तम ते का बोलाए ।

अवधू सूक्ष्म बोलिए दृष्टि न देख्या जाय ।

मुष्ठि न गह्या जाए, एता एक सूक्ष्म बोलिए ।।

सत्वगुण—विष्णु, रजोगुण—ब्रह्मा, तमोगुण—रुद्र ।

तीन गुण—पांच तंत, पच्चीस प्रकृति का अदम बोलिए ।

प्रश्न :—

स्वामीजी ! त्रिगुण ते का बोलिये ?

पांच तन्त ते का बोलिये ?

पच्चीस प्रकृति ते का बोलिये ?

उत्तर :—

अवधू ! तीन गुण ते राजस, तामस, सात्विक बोलिये ।

पांच तंत पृथ्वी आप (जल), अग्नि, वायु, आकाश बोलिए

(१) पृथ्वी की प्रकृति–अस्थि, मांस, त्वचा, नाडी,

रोमावली ए बोलिए ।

(२) आग की प्रकृति–लार, रुधिर, मूत्र, शुक्र, पसीना

ए बोलिए ।

(३) तेज की प्रकृति—निद्रा, तृषा आलस्य, क्रोध, क्षूधा ए बोलाविए ।

(४) वायु की प्रकृति—चालणा, धारणा, बलावणा, संकोचण, प्रसारण, बोलाविए ।

(५) आकाश की प्रकृति—लज्जा, माया, मोह, काम, भय ए बोलाविए ।

प्रश्न :—

(१) पृथ्वी का कौण वरण (२) आ पका कौण वरण
(३) तेज का कौण वरण (४) वायु का कौण वरण
(५) आकाश का कौण वरण बोलाविए ।

उत्तर :—अवधू !

(१) पृथ्वी का पीत वर्ण (२) आप का श्वेत वर्ण (३) तेज रक्त
(४) वायु हरा (५) आकाश श्याम ए वरण बोलाविए

प्रश्न :—

(१) पृथ्वी का कौण स्वाद (२) आप का कौण स्वाद
(३) तेज का कौण स्वाद (४) वायु का कौण स्वाद
(५) आकाश का कौण स्वाद बोलाविए !

उत्तर :—

(१) पृथ्वी का मीठा (२) आप का खारा (३) तेज का तीखा (४) वायु का खाटा (५) आकाश का मिजला

प्रश्न :—स्वामीजी !

(१) पृथ्वी का कौण स्वभाव ! (२) जल का कौण स्वभाव !
(३) तेज का कौण स्वभाव ! (४) वायु का कौण स्वभाव !
(५) आकाश का कौण स्वभाव !

उत्तर :—अवधू !

(१) पृथ्वी बैठी (२) आप शीतल (३) तेज ताता
(४) वायु चलता (५) आकाश ऊभा

प्रश्न :—स्वामीजी !

(१) पृथ्वी का कौण गुरु ! (२) आप का कौण गुरु !
(३) तेज का कौण गुरु ! (४) वायु का कौण गुरु !
(५) आकाश का कौन गुरु ?

उत्तर :—अवधू !

(१) पृथ्वी का गुरु मन देवता वाचा स्वरुपा
(२) आप का गुरु चन्द्र देवता बुद्धि स्वरुपा
(३) तेज का गुरु सूरज देवता अग्नि स्वरूपा
(४) वायु का गुरू ईश्वर देवता आनन्द स्वरूपा
(५) आकाश का गुरु गोरख (निरंजन-व्यापक) देवता अविगत रूपा

प्रश्न :—स्वामीजी !

(१) पृथ्वी का कौण घर ? कौण द्वार ! कौण आहार ! कौंण निहार ! कौण व्यौहार !

(२) जल का कौण घर ? कौण द्वार ? कौण आहार ? कौण निहार ? कौण व्यौहार !

(३) तेज का कौण घर ? कौण द्वार ? कौण आहार ? कौण निहार ? कौण व्यौहार ?

(४) वायु का कौण घर ? कौण द्वार कौण आहार ? कौण निहार कौण व्यौहार ?

(५) आकाश का कौण घर ? कौण द्वार ? कौण आहार ? कौण निहार ? कौण व्यौहार ?

उत्तर :—अवधू !

(१) पृथ्वी का कलेजा घर, गुदा द्वार, खाई पीवे अहार, अमरी बजरी निहार, लोभ लालच व्यवहार ।

(२) जल का ललाट घर, इन्द्रि द्वार, त्रिया आहार, बिन्दु निहार, भोग-मैथुन व्यवहार ।

(३) तेज का पोता घर चक्षु द्वार, दृष्टि आहार, हरष निहार, मोह व्यवहार ।

[४] वायु का नाभी घर, नासका द्वार, वासना [गंध] आहार, निरवासी, निहार पिन्ड खण्ड व्यवहार ।

[५] आकाश का ब्रह्मंड घर, श्रवण द्वार, नाद आहार, जिभ्या निहार, अहं-क्रोध व्यवहार ।

प्रश्न :—स्वामीजी !

[१] पृथ्वी की कौण भारजा ? [२] आपकी कौण भारजा?

(३) तेज की कौण भारजा ? (४) वायु की कौण भारजा ?
(५) आकाश की कौण भारजा ?

उत्तर :—

[१] पृथ्वी की भारजा साधू नवता
[२] आप की भारजा मनसा-चोरटा
[३] तेज की भारजा कल्पना- चन्डाली
[४] वायु की भारजा चिंता-डाकण
[५] आकाश की भारजा असाधन-वृत्ति

प्रश्न :—स्वामीजी !

[१] पृथ्वी कौण गुणी ? [२] जल कौण गुणा
[३] तेज कौण गुणा ? [४] वायु कौण गुणा ?
[५] आकाश कौण गुणा ?

उत्तर :—अवधू

[१] पृथ्वी मूल गुणी [२] जल वृद्ध गुणा
[३] तेज रूप गुणा (४) वायु अमल गुणा
[५] आकाश मैथुन गुणा?

प्रश्न :—

पांच तत्त्व का वरण, स्वभाव, गुण भी कह्या,
गुरु घर द्वार अहार, व्यवहार कह्या ।
पांच तत की उत्पत्ति कहां ते कहो—तोपपति ।

उत्तर :—अवधू ।

अविगत ते उत्पत्ति ओऊं, ओऊं उत्पपति ते आकाश,
आकाश उत्पति ते वायु, वायु ते उत्पत्ति तेज,
तेज उत्पत्ति ते तोया, तोया ते उत्पत्ति पृथ्वी ।
मही ग्रासं ते तोया, तोया ग्रासं ते तेज,
तेज ग्रासं ते वायु, वायु ग्रासं ते आकाश
आकाश ग्रासंते अविगत रहत आवंते न जावन्ते ।
निरंजन देवता पाणी जिंद, अग्नि पूठ, पवन का थंभा,
सुरत निरत को सोधि शुन में समाया हो देवता !

।। इति पिण्ड-ब्रह्माण्ड का निवारण बोलिये ।।

❋ अथ आतम बोध वर्णन ❋

ॐ शब्द ही ताला, शब्द ही कूंची,
शब्द ही भया उजियाला ।
कांटा सेती कांटा टूटे, कूंची सेती ताला ।
सिद्धि मिले तो साधक निपजे, जब घट होय उजाला ।।१।।
अलख पुरुष मेरो दृष्टि समाना, संशय गया अपूठा ।
जब लग पुरुष तन मन नहीं खोजे, कथे बदे सब झूंठा ।
सहज स्वभाव मेरो दृष्टि में फोटी, सींगी नाद संग मेला ।
अमृत पिया विषय रस टारया, गुरु गारडू अकेला ।।२।।

सर्प मरे बांबीऊं त्रिनासै, कर बिन डमरू बाजे ।
कहै नाथ जो इहि विधि जीते, पिंड पडे तो सतगुरु लाजे ।३।
दरशण गांहि दरशण देख्या, नीर निरन्तर झाई ।
आपा मांहि आप प्रकटिया, लखे तो दूर न जाई ।४।
चकमक वर के अग्नि जरे, यूं दधि मथ घृत कर लिया ।
आपा मांहि आपा प्रकटया, तब गुरु संदेशा दिया ।५।
सुरति गहो संशय जिमि लागो, पूंजी ज्ञान न होई ।
एक शरण सतगुरु की रहवा, टारया टरे ना कोई ।६।
अमरा भरया भरया गम करिके, गुरु चरणां में रेण ।
परचा ले तो तापर निपजे, नहीं तौ सहवे न वेणां ।७।
जे लूटयां ते खबर न पाई, कसि कसि डाई डांडी ।
तन मन को कछु खबर न पाई, सुरत विगोया रांडी ।८।
बिंद और भग बाधनि और बिन दांतां नहीं खाया ।
प्राण पुरुष का मन भर पाया, छोड़ विगूते माया ।९।
सोद्यो लाकड़े ज्यूं घुण लागे, लोहे लागे काई ।
बिन परतीती कहां गुरु कीजे, काल हूं ग्रास्या जाई ।१०।
रांडो तज्या नपुंसिया जोवे, पुरुष तज्या नाहीं नारी ।
कहे नाथ ए दीनूं विनसे, धोखा की असवारी ।११।
बैद सर मुख ब्रह्म होता सुझायाऊं आ बानी ।
अश्वमेघ ब्रह्मा जिग निपजे, जुगत जमाया पानी ।१२।

तो जगराड्यां जोगेश्वर व्याया, संगे शक्ति सूंफेरा ।
जा पद मंदिर पुरुष विलूंब्या, वही मंदिर घर मेरा ।१३।
या रहणी मैं घर घर वासा, जोग जुगति से पाया ।
सिद्ध समाधि पंच घर में ला, गोरख तहां समाया ।१४।
हाली भीतर खेती निपजे निणे, बैगु में ताल समाई ।
बैरखे मौर कहूं कैसा वेणा, नहीं अफूटी आई ।१५।
गनपद मांहि पेहों कर फंद के दादुर भरयाई लारे ।
चातक में चौमासा बोले, ऐसा समा है मारे ।१६।
आशा तृष्णा थिर है बैठी पद परचे सुषमो दाया ।
सूखा तरुवर कूंपल मेलही, इस विधि निपजे काया ।१७।
पूरब देश पछांही घाटी, जनम लेख्या हमारा जोग ।
गुरु हमारो नावेगर केही, ए मेटे भ्रम वियोग ।१८।
नव ग्रह मार अग्नि में झोंक्या, इन्द्र लाग्या रह डोरी ।
परम पुरुष पिंजरे में विलुम्ब्या, भई अगम गति मोरी ।१९।
अकथ कथाय मन अक्षर बाच्या, अगम गमन करि लिया ।
हंस विलूंब्या बूंद न ढलके, बहि सरवर बंध दिया ।२०।
बोले नाथ गगन वर वासा, अन्तर बसिया जाई ।
परम पुरुष मेरे कागज मांड्या, दिन दिन कला सवाई ।२१।
ऐसो रमभ्र जैसे नख सिख भेदे, शंक्या शरीर न लूटे ।
चलत फिरत पद मांहि समाया जनम मरण भय छूटे ।२२।

मरि मरि जाई सु संशय मांही, तन काम जग दाझया ।
धोखे जनम गमावे प्राणी, सो पद पंथ न सूझया ।२३।
अटल साधन निर्मली जोगी, ता पुरुष की रहनी ।
या रहनी अमृत रस निपजे, लोहा कंचन पद मैं दहनी ।२४।
नीर नीर अमोने मुख बरणे, सींचे बाग हमारा ।
या रहनी ते पय के बर निपजे, तिसियां मरे संसारा ।२५।
इन्द्र मिलया ते धरणी निपजे, इन्द्री बरषे देही ।
गुरु हमारा वाणी बोल्या, माणिक चुण चुण लेही ।२६।
पारस से पत्थर अविनाशी, ज्यूं अष्ट धातु मैं सोना ।
यूं सब जग मांहि समझ अविनाशी, ता घट पापन पूना ।२७।

बहती नदी भाव घर थांभी, सूरज देखी पछांही ।
दुर्लभ देवल मन अगोचर, ता बेल्यां फल खाही ।२८।
नवलख किरण अफूटी प्रकट, कोटि किरण मुख आगे ।
कहे नाथ धरम का पैंडा, संशय बूंद न लागे ।२९।

गिरही के घर जनम हमारा संगत सूरति दिढाणी ।
कहे नाथ जीव ब्रह्म एके, जब शिव घर शक्ति समाणी ।३०।

अनहद धुनि में रहे निहमारा, तत्त देखि मन लागा ।
आपा मांहि आपा प्रकटया, तब जाय धोखा भागा ।३१।

जे नर योनि अयोनि शंभू, सिद्ध पुरुष से मेला ।
जा रहनी में थान, हमारा, ता घटि पुरुष अकेला ।२३।

ऊरध भरे सो थिर ह्वै जीवे सूधे घटे संवारी ।
अंधे लोचन सब जग सूझे, सालिम सब अंधियारी ।१३।
तूंबो मैं इह लोक समाना, त्रिवेणी रहि चन्दा ।
बूझत है कोई ब्रह्म ज्ञानी, अनहद नाद अभंगा ।१४।
आवा गमन भरम का मारग, पुरुषां पन्थ बताया ।
शब्द अतीत अनाहद बोले, अन्तरगति समाया ।१५।
विमल पंथ बिजली जहां चमके, घर हरता घर गाजे ।
ता रहनी से जोगी का घर, अनहद बाजा बाजे ।१६।
जा पद मंदिर ध्वजा फरहरे, मढ़ी सँवारे चेला ।
कोटि कला जहां की अनहद बानी, गावे पुरुष अकेला ।१७।
नौ लख पातर आगे नाचे, पीछे सहज अखारा ।
ऐसे मन ले जोगी खेले, तब अन्तर बसे अडारा ।१८।
ज्ञान गहे तो तृष्णा हारे, सूरत देखि पछांहीं ।
सतगुरु मिले तो संशय भागे, मूल बिचारया मांही ।१९।
अंजन मांही निरंजन भेट्या, तिल मधि भेंट्या तेल ।
मूरति मांहि अमूरति परस्या, भया निरंतरि खेल ।२०।
जहां नहीं तहां सब जग देख्या, कह्या न कोई भावे ।
सब जग भ्रमत भूला डोले, गुरु की गति समावे ।२१।
हथरी डिबिया अजब अनोखी, अंगानि बल मुलतान ।
हीरे में हम जोगेश्वर, जिपना अपणा पद निरशान ।२२।

बाफ न निकले बूंद न ढलके, सहजे अंगीठी भरि २ रांधे ।
सिद्ध समाधि जोग अभ्यासो, तब गुरु परचे सर सांधे ।४३।
धीरज पद भज डोरी झेली, धुनि समानि असमान ।
अटल उलीचा अखै पद, तह गोरख दीवान ।४४।

।। इति ज्ञान तिलक समाप्त ।।

❋ अथ अभय मात्रा कथन ❋

ॐ अकल पथ अकल का मारग सति, भूमि सेज अपाण ।
प्राणानाथ जोगी पवन गोटिका,
निज भंवर गुफा सहज संयम को पीन ।
मरजादा मेखली, निह केवल जो गोटिका ।
जुगति उड़ाणी शील कंथा, क्षमा टोपी, जरणा आधारी ।
अंतरगति झोली सांच मूंझा, अकल पत्र आमिति डाबी ।
त्रिगुण डाहा अल्हाब कपाली, संतोष तिलक धीरज दंड ।
बमक पहाड़ी तप चक्र, मूल कमंडल मन उदिक ।
महा अमृतभाजन कलस, पात्र त्रिपति सिद्ध दिया रहैगसि ।
विचार पुस्तक जिभ्या रसायणी ।
सरबंगी कला वैद्या काल बंचणी ।
निर्भय नगरी अमरपुर पटण, अकल बन खण्ड ।
अभग तरवर, अचल छाया अमर मूल ।
जग पलवे अमी कली सूं सील, संतोष फल ।

निराकार कल्प वृक्ष, सिंभ सरोबर, निरास मढ़ी ।
अतीत देवता ज्ञान दीपक, अकल प्रहरी, अयाचिक भिक्ष्या
शब्द सींगी अनाहद किगु'री, पवन अधारी अष्टांग जोग,
अमृत प्याला, निश्चल रिद्धि, सत करामात ।
अजपा जाप, अलख दरशण, निरंतरि ध्यान, अटल समाधि
सार मात्रा तत्सार, अलख निरंजन निराकार ।
कथत गोरखनाथ जोगी, सतसत भाखत बाबा मच्छंद्र नाथ ।

॥ इति अभय मात्रा समाप्त ॥

❋ अथ बत्तीस-लक्षण, ज्ञान-परीक्षा ❋

निरलोभी, निश्चल, निर्वासी निह शब्द ।
विचार पारख्या, निरमोही निरबंध ॥
निशंक निरवाण, विवेक पारख्या ।
सरबंगी सावधान, सतसार ग्राही ॥
संतोष पारख्या, अयाचिक अवांच्छिक ।
अमानिक अथोर न बल पारख्या ॥
निष्प्रपंच निःउदीन, निरालेप निरमजहब ।
पारख्या दया सत्य, सारक निष्कपट अज्ञान ॥
पारख्या शुचि संयम श्रोत, शांत दांत तितिक्षा मन। ।
भक्तिकाल वर सिद्धां पाई, साधिका पाई जो जन उतरे पार ।

॥ इति ज्ञान पारख्या लक्षण कथन ॥

❋ अथ सृष्टि पुराण वर्णन ❋

एक ऊपर लेखा नाहिं, दोई पाछे सृष्टि नाहिं ।
आशा पाछे परजा नाहिं, गुरु पाछे ज्ञान नाहिं ।
दया ऊपर धर्म नाहिं, शील ऊपर शुचि नाहिं ।
जप ऊपर तप नाहिं, सांच ऊपर शास्त्र नाहिं ।
नासिका ऊपर गंध नाहिं, नैना ऊपर दृष्टि नाहिं ।
श्रवण ऊपर श्रुति नाहिं, गर्भ उपरांत नर्क नाहिं ।
खल उपरान्त हानि नाहिं, घार उपरांत जाय नाहिं ।
चंदन उपरान्त काष्ठ नाहिं, शिव उपरांत देव नाहिं ।
काया ऊपर क्षेत्र नाहिं, शब्द ऊपर बाण नाहिं ।
निरभय ऊपर भय नाहिं, संयम ऊपर पाक नाहिं ।
संतोष ऊपर सुख नाहिं, अमृत ऊपर सिद्ध नाहिं ।
अनुभव ऊपर करामात नाहिं, माता उपरांत जन्म नाहिं ।
चिन्ता उपरांत रोग नाहिं, काल उपरांत बैरी नाहिं ।
वृद्ध ऊपर मृत्यु नाहिं, ज्ञान ऊपर ग्रन्थ नाहिं ।
अजपा ऊपर जाप नाहिं, नारायण ऊपर इष्ट नाहिं ।
निरंजन ऊपर ध्यान नाहिं, संत सभी कथ्या याहि ।
विद्या ऊपर मति नाहिं, बोद्ध ऊपर बाध नाहिं ।
क्रोध ऊपर अग्नि नाहिं, शील ऊपर शान्त नाहिं ।

॥ इति सृष्टि पुराण समाप्त ॥

✻ अथ चौबीस सिद्धि कथन ✻

प्रथम चौबीस सिद्धि बोलिए, पृथ्वी ऊपर ते कौण-कौण ?
प्रथम अणिमा सिद्धि को लक्षण, माया शुन सूझै ।१।
महिमा सिद्धि को लक्षण, लघु दीर्घ देह दिखावे ।२।
गरिमा सिद्धि को लक्षण, ब्रह्मा का स्वरुप दिखावे ।३।
लघिमा सिद्धि को लक्षण, अनेक रूप देव धरे ।४।
प्राप्ति सिद्धि को लक्षण, स्वेच्छा रूप काम करे ।५।
प्रकाशित सिद्धि को लक्षण, सर्व तत्व को वश करे ।६।
असत्या सिद्धि को लक्षण, उपावे वस्तु को खपावे ।७।
आवेश्या सिद्धि को लक्षण, ब्रह्मादिक आज्ञा में रहे ।८।

।। इति अष्ट भूतनाथ सिद्धि कथन ।।

मनोज सिद्धि के लक्षण, सबै कामना को जाणे ।९।
छछ् मुक्ता सिद्धि के लक्षण, मनमाने तहां घर छोड़े ।१०।
अनुराग सिद्धि के लक्षण, शीतल करे सभी को भरे ।११।
परकाया प्रवेश सिद्धि के लक्षण, और काया में प्रवेश करे ।१२।
भूमि सिद्धि के लक्षण, भूमि आज्ञा में रहे ।१३।
जल सिद्धि के लक्षण, जल आज्ञा में रहे ।१४।
दूर श्रवण सिद्धि के लक्षण, दूरी की बात सुना करे ।१५।
दूर दर्शण सिद्धि के लक्षण, दूरी वस्तु का दर्श करे ।१६।
काम कामोद सिद्धि के लक्षण, कामना इच्छे सो करे ।१७।
अप्रहता सिद्धि के लक्षण, मन माने तहां जाय ।१८।

देविता सलि सिद्धि के लक्षण,

सर्व देवता सूं केलि करि आय ।१६।

रूपता सिलि सिद्धि के लक्षण,सर्व देवता को रुप धरे ।२०।

विजय सिद्धि के लक्षण, कहूं हारे नांहि विजय करे ।२१।

त्रिकाल सिद्धि के लक्षण, छः मास आगे की कहे ।२२।

अग्नि सिलि सिद्धि के लक्षण, अग्नि में जले नहिं काय २३।

शब्दा सिलि सिद्धि के लक्षण,

सत्य शब्द कहे सो हो जाय ।२४।

इति चौबीस सिद्धि, ब्रह्मज्ञानी के आडी आवे ।२५।

इति चौबिस सिद्धि, आई होय तो सतगुरु प्रसाद ।२६।

ते त्यागे सोई जोगेश्वर, सोई ब्रह्मज्ञानी बसत ।

अपार संशय खोय, यति गोरख समझावे ।२७।

इति चौबीस सिद्धि को त्यागे,

सोई परम ज्योति को पावे ।२८।

इति चौबीस सिद्धि कथन ॥

❋ अथ आतम बोध वर्णन ❋

सा तो सालिगराम उपाया, टांकी घड़या न किन हूं उपाया ।

न काहू के घर जाया, आपे आप जु अपरम्पार ।

योनि संकट नाया प्रवशि नहीं, उद्म नांहि करता ।

मनसा करि आप उपाया, जोरनि हारे लिया न जाई ।

ताका मन क्यों जाय, मनाई दास भाव कहा लौं काजे ।
कैसी सेवा भावे सब दास कर
आप ही सबका भला मनावे ।
सालिगराम सो मन ही मांही निशि दिन सेवा होई ।
पार ब्रह्म सूं मन लपटाया, जानेगा जन सोई ।
मन के भीतर अलख निरंजन, परम ज्योति प्रकाशी ।
मन ही मांही देखन लागा, तब उलटि मिल्या अविनाशी ।
जब लग दूजा भावे भरम है, सूक्ष्म देत दिखाई ।
पतिव्रता को बड़े दशरावे करे तो फिरे बुराई ।
मन ही मांही सहज सपूता, मूरति देश दिखाई ।
शब्द अगाध अनाहद लूंब्या, सतगुरु दिया बताई ।
हाथ न पांवे कान न नैना, बिन जिभ्या हीं गावे ।
पूरण एक इसी घट चेतन, गुरु गम दर्श लखावे ।
पाया सोई आप लखाया, गुरु बिन ज्ञान न पांवे ।
सतगुरु ज्ञान लखाया, चेतन, गोरख कहि समभावे ।

।। इति आतम बोध समाप्त ।।

❋ अथ पंचाक्षरी कथन ❋

गोरखनाथ गोरखनाथ लिव स्वरूप, गो इन्द्रिय पालन ।
अगोचर हर गंभीर, गकाराय हर नमो नमः ।१।
रहत निरालम्ब अस्थंभ भवन त्रिय ।
राख राख श्रवण भूतानां, रकाराय नमो नमः ।२।

खकाराय इक्कीस ब्रह्मण्ड, खेचर जगत गुरुन ।
क्षैत्रपाल खरंग बसे, खकाराय नमो नमः ।३।
नाना सास समुदाई, नाना रूप प्रकाशांत ।
नाद बिंद सम्मो जोशी, नकाराय नमो नमः ।४।
थापित तल संसार, ब्रह्म अलख अपार ।
थावर जंगम सचराचर, थकाराय नमो नमः ।५।
गकार ज्ञान संयुक्तं, रकार रूप लक्षणम् ।
खकार इक्कीस ब्रह्मण्ड, नकार नाद बिंदये ।
थकार थान मन यो ।६।

।। इति षड्क्षर समाप्त ।।

❋ अथ रहराशि कथन ❋

ओऊं आदेश आदेश अलख अतीत,
तदा न होसी धरती आकाश ।
तदाकाले भू भई हमारी उत्पत्ति,
माता न लेवो दश मास भार ।
पिता न करिबा आचार विचार,
योनि न आइबा नाभिन कटाइबा ।
पोथी पुस्तक ब्रह्मा न अचाइबा, तहां अलेख पुरुष पटण ।
अनुपम शिला, तहां बैठे गोरख राई
तुम दमड़ी चमड़ी का संग्रह करो,
गुरु का शब्द ले ले दो जग भगे ।

गुपति चक्र चलाओ हथियार, पंडित बुद्धि बहुत अहंकार ।
ऊभा ते सिद्ध बैठा ते पाषाण, गोरखनाथ वाचा प्रवाण ।
अनंत सिद्धों में रह राशि कही, गोदावरी के मेले ऐसी भई ।

।। इति रहराशि कथन समाप्त ।।

❋ अथ दया बोध कथन ❋

आवो सिद्धो खोज बताऊँ, आदि नाथ का पूत कहाऊं ।
योगारम्भ की याही वाणी, घट नाथ एक करि जाणी ।
योगारम्भ हृदय में मांडों, दया उपावो जूती छांडो ।१।
नागा पावां जे जन मूआ, तांका कारज पेली हुआ ।
आप स्वारथ चालों धूई, तामे चिऊँटी केतो मुई ।२।
तजो कहर नजर बटवा, जिन शान्ति लो हाथ ।
एता आरम्भ पर हरो, यूं कथे यति गोरखनाथ ।३।
मारग चलता जो धरणि दृष्टि राखे,
तो ताके काज कोई न भागे ।
पहली आरंभ हम भी करतो, जीव जन्तु बहुतेरा हततो ।४।
आरम्भ खोय योगी हो धाया,
लावो निरत सुद्धि मारग जोया ।
अविनाशी गम लाला रंग, रिद्धि सिद्धि ताही के संग ।५।
रिद्धि तो गौरां के सांथ, सिद्धि है शंकर के हाथ ।
छांडो अकल सकल की गांथ, एसे कहे यति गोरखनाथ ।६।

आसन तजि अनंत जनि जावो, अकल्प भिक्षा बैठा खावो।
नातर पांच घर चिताइवा, एकान्त वास रहिबा।७।
कण कण पकड़े कोरो लकेल, आई रिद्धि को योगी बेले।
हरया सैणा को सतावे जीवे,
सो जोगी कहिये प्रत्यक्ष सीवे।८।
चकमक कफ का नाम न धरो,
पर आतम का परला जिन भांडो।
अग्नि न बालो धूआं ना थोटों,
भिक्षा बार कर पात्र ले बोटो।९।
गबाड़ां बिच आसन जिन मांडो,
मोह लगाये आपा जिन माहो।
बाई बावड़ी को मन नहीं दीजे,
देखत दृष्टि काया तन छीजे।१०।
पंडित पढ़ गुण करे न आशा, देखि एकांत रहे निरासा।
काहे को पढ़ गुण भला कहावे,
जब लग हृदय दया न आवे।११।
जब लग हृदय दया नहीं आई,
तब लग कहिए शुद्ध कसाई।
कन कन पकड़े शब्द न बावे,
जोगी कागद कहां ते लावे।१२।

तन में पोथी मन में लेखिनि, एती निज है सहै तंतनि ।
साधन शुद्ध पाले संपति, यूं कथत है गोरख जति ।१३।
उहां चलिबे का करो विचारा, निद्रा अल्प रसुलष आहारा ।
घट का देव औघट गावे, तहां जोगेश्वर लागी सेवे ।१४।
पंच चेला मिल पूरया नाद, धरण गिगन बिच भई आवाज ।
दीपक एक अखंडित बाती, तहां ज्योगेश्वर थाप न थापी ।१५।
अगम अगोचर सकल ब्रह्मंड, ता दीपक के चरण न पिंड ।
श्रवण शीश चरण नहीं हाथ
सो दीपक देख्या गोरखनाथ ।१६।

ता दीपक के डाल न मूल, ता दीपक के कली न फूल ।
ता दीपक के रंग न रूप, ता दीपक के छांह न धूप ।१७।
ता दीपक के शब्द न स्वाद, ता दीपक के विद्या न बाद ।
ता दीपक के मोह न माया,
सो दीपक शुन्यै सून्य समाया ।१८।

।। इति दया बोध समाप्त ।।

❋ अथ ज्ञान माला कथन ❋

औऊँ संतोष सारिषा न पिता, क्षमा सारषी न माता ।
दशा सारिषी न भगनि, क्षुधा सारिषी न अग्नि ।२।
आरम्भ सारिषा न भ्राता, निरंजन सारिषी न दाता ।
कूरूप सारिषा न रतन, जत सारिषा न जतन ।३।

बैराग सारिषा न ज्ञान, निराकार सारिषा न ध्यान ।
पुनिता सारिषी न शांति निशी सारिषी न राति ।३।
जाग्रत सारिषी न ज्योति, संबाद सारिषी न बाति ।
दीदार सारिषी न ज्योति, काया सारिषी न पोथी ।४।
दया सारिषी न छाया, अहार सारिषी न माया ।
क्षमा सारिषी न रूप जत सारिषा न अनूप ।५।
सतगुरु सारिषी न विद्या, हरि नाम सारिषी न रक्ष्या ।
प्रकाश सारिषा न पण्डिता, मन सारिषा न पुछिता ।६।
मंत्र सारिषा न जाप, बालक सारिषा न निहपाप ।
भाव सारिषी न सेवा, अतीत सारिषा न देवा ।७।
शब्द सारिषी न बाण, क्रोध सारिषा न पांण ।
मुक्ति सारिषा न पद, रहत सारिषा न हद ।८।
प्राण सारिषा न आधार, जोग सारिषा न सार ।
स्वप्न सारिषा न छल, बुद्धि सारिषा न बल ।९।
गुरु सारिषा न अलख, आप सारिषा न लख ।
रहत सारिषा न अपार जोग सारिषा न सार ।१०।
वाचा सारिषा न बंध, काया सारिषा न संध ।
अस कथी श्री शंभूनाथ, ताही सार कहै गोरखनाथ ।११।

।। इति ज्ञान माला समाप्त ।।

—: अथ रोमवलि अंग कथन :—

मख सख पिता रज तात तन गाडे धारो
लोही मांस त्वचा नाड़ी, ए च्यार धातु माता की बोलाए।
बोरज हाड गोंदा मीजी, ए तीन धातु पिता की बोलाए।
ए सप्त धातु शरीर की बोलिए, दोई हाथ दोई पैर छाती।
लिलाट वट अष्टांग जोग बोलिए ते जोग जोगी।
बिंदु भेद मुद्रा, तिन साधे ते सिद्ध बोलिए।
तो स्वामी कौण बंध बांधिये ते कौण भेद भेदिये ?
कौण मुद्रा मूंदिये, ए घट बोलिये ते कौण कौण ?
अवधू मन बंध बांधिये, पवन भेद भेदिये।
बिन्दू मुद्रा मूंदिये।
तो स्वामी कौण विमल विचारे, कौण करे कौण केरे ?
तो अवधू मन विमल विचारे, सूर करे चन्द्र केरे।
तो स्वामी हिन्द पीर क्या बोलिये ?
जिंद पीर क्या बोलिये ?
तो अवधू हिन्द पीर मन बोलिये, जिंद पीर पवन बोलिये।
तो स्वामी खैचरी भौचरी, गुप्त प्रकट बोलिये ते कौण कौण ?
तो अवधू खैचरी बोलिये मन, भौचरी बोलिये पवन।
गुप्त बोलिये तो लीला ज्ञान प्रकट बोलिये भौतिक शरीर।
तो स्वामी शरीरार्थ परमार्थ'
गूढार्थ ए घट बोलिए ते कौण कौण ?

तो अवधू शरीरार्थ बोलिए, ते शरीर प्रक्रिया जान ।
परमार्थ बोलिए प्राण भेद, गूढार्थ बोलिए ज्ञान ।
तो स्वामी चार पीर बोलिए, घट भीतर ते कौण कौण ?
तो अवधू मन छिद्र, शरीर ईश्वर, चित चौरंगी, ज्ञानगम ।
ए चार पीर बोलिए ।
तो स्वामीजी चार तत्त प्रबल, घट कौण कौण ?
तो अवधू चक्षु द्रिष्टी कहे क्यूं लीजे दीजे ।
श्रवण सुरति कहे क्यूं बोलाए ।
नासिका कहे सुगंध वासना अमलादिक लीजे ।
जिभ्या कहे क्यूं खारो, मीठो खाइए ।
तो स्वामी दिशा चार बोलिए, पेट भीतर ते कौण कौण ?
तो अवधू शबद उत्तर, पवन पश्चिम,
इन्द्रिय दक्षिण, सुरत पूर्व ।
तो स्वामी चार उपदिशा बोलिये घट ते कौण कौण ?
तो अवधू (१) ऊरम (२) कूरम (३) ज्योति (४) ज्वाला ।
अवधू (१) ऊरम बोलिए, पवन, (२) कूरम बोलिए मन ।
(३) ज्योति बोलिए नैत्र, (४) ज्वाला बोलिये श्रवण ।
तो स्वामीजी चार खाणी बोलिये,
सेरज, जेरज, इन्डज, उद्भिज ।
सो स्वामीजी सेरज कौण बोलिये ! जेरज कौण बोलिये ?
इन्डज कौण बोलिये ? उद्भिरज कौण बोलिये ?

तो अवधू सेरज बोलिये हाड, जेरज बोलिये वीरज ।
इंडज बोलिए नेत्र, उद्भिज बोलिये रोमावली ।
तो स्वामी चार वाणी बोलिए, घट भीतर ते कौण कौण ।
अवधू सो देह बोलिये, शरीर संयम बोलिए पवन ।
सुपाव बोलिए प्राण, अतीत बोलिए परम पद ।
महासमुद्र में हाड, जेना न ग्रामदा महा अजोना ।
शम्भू बोलिए वाणी, वाणी विचारते निराकार बोलिए ।
ओऊंकार मध्ये ज्योति जाणिए,
ऊरम धूरम ज्योति ज्वाला भेद ।
रवी की चार कला मन का, हस्ती बिंब जल पीवे ।
कोई पक्ष चीन्हे सोई, ले कला जोवे ।
बारह कला सूरज की सोलह कला चन्द्रमा की ।
गुरु जिसको नहिं लखावे, चेला तिसका अन्ध ।
तो स्वामी बारह कला सूरज, की
ताके गुण घट भीतर कौण ?
अवधू ! बारह कला के नाम सूरज को बोलिए—
(१) चित (२) तरंग (३) दम्भ (४) भ्रमाया
(५) प्रगहन (६) प्रपंच (७) हेत (८) बुद्धि
(९) काम (१०) क्रोध (११) लोभ (१२) दृष्टि
इति बारह कला सूरज की बोलिए ।
स्वामीजी ! सोलह कला चंद्रमा की, ताके गुण घट में कौण?

अवधू ! चन्द्रमा की सोलह कला के नाम ए बोलिए—
१. शांति २. निवृति ३. क्षमा ४. निरमल ५. निश्चल
६. ज्ञान ७. स्वरूप ८. पद ९. निरवाण १०. निर्विष
११. निरवासिक १२. निरंजन १३. अहार १४. निद्रा
१५. मैथुन १६. बोद्ध, सोलह कला चंन्द्रमा की बोलिए ।
चार तन की, चार मन की, चार वाणी की,
चार अन्तरगति की कला शोड़ष चंद्रमा की पावे ।

।। इति रोमावली समाप्त ।।

❋ अथ पंच मात्रा कथन ❋

ओऽं अनादि बोलंत, खरतर पंथ, जिभ्या इंद्रि दीजे बंध ।
जोग जुगति में रहे समाय, सो जोगेश्वर जय कराय ।
द्वादश मंदिर शिव स्थान, वहां उत्तम ब्रह्म गियान ।
द्वादश निश्चल एक में रहे, ते जोगी सिर टोपी दहे ।
देखो ए तत शुन्य आकाश, पंच तंत महापुरष का बास ।
पांच तंत ले उनमुन रहे, इच्छा होय दूजो गंद कहे ।
पांच तंत का करहूं विचार, बाहर भीतर एकंकार ।
भिक्षा मांगे नगरी द्वार, माया मोहं तजे जंजार ।
एता एक अवधू पंच तंत मात्रा का,
विचार वदत गोरख एकंकार ।
सुण हो जोगी अध्यात्मक जोग, अर्ध उर्ध मधि कमली भोग ।

मन मूंडे, तो मस्तक मूंड, नहीं तो परे नरक का कुण्ड ।
आदि संख अनिल उपाया,
अनंत सिद्धां ले मस्तक लगाया ।
कान सुणाय गुरु दीनी दीक्षा, नवखंड पृथ्वी मांगे भिक्षा ।
भिक्षा मांग निरंतरी रहे, तो जोगी काने मुद्रा बहे ।
औऊँ हाथ गल कंथा पाय चंद सूर थेगला लगाय ।
अऊठ कोटि दशा धागा भरे, गुरु प्रसाद दुस्तद तरे ।
काया कड़ासन मन जो गोटा, पांचों इन्द्री करो कछोटा ।
जत सत क्रिया शबद चलावो, ऊंडा लाग डीबा पावो ।
दक्षिण उत्तर पश्चिम पूर्ब पावा ते जोगी जे गोटा चलावा ।
माथे जट्टा दशंण विकाल, अवध जोगी बचो काल ।
सींगी सेली अरु जप माला, बांई फेरो गगन मकारा ।
नवे बहृतर पवना मूल षट चक्र गोरी त्रिशूल ।
अलख पुरुष तहां को ध्याया, नगर कर्ट ऊर्ध ते आया ।
चित चक्र में जे पवना गहे, ब्रह्म अग्नि प्रकटे जल रहे ।
विषम २ करे सब कोय, बिना निरंजन मुक्ति न होय ।
मूल चक्र तहां सहस्त्र दल बाट मन पवना ले खोल कपाट ।
गोरख विषम लागा बाद, गोरख ले बजाया नाद ।
वृषभ लिया मृग का रूप, मारया मृग भया अवधूत ।
पूर्ब जाता पश्चिम हंस, मारया मृग भीख ले मंस ।
अपना दर्शन देखया जाय, वाही के संग रहे समाय ।

अंतरगति कों जोगी बोय, सींगीनाद गगन धुनि होय ।
आतम रूप कों पाया पाय शक्ति चंदन गगन समाय ।
पांचों इन्द्रिय पूरे नाद, ते अंग अरधे जा सींगी नाद ।
अनहद नाद ऊर्ध का मूल, चंद सूर सूक्ष्म अस्थूल ।
वारि गंगा, पारि गंगा, भधि जोगटा ध्यान ।
गंग जमुन ले मेरू चढ़ाई, तहां प्रकटया ब्रह्म का ज्ञान ।
सैली सींगी और षडासरा, अनंत सिद्धों लीना जाय ।
द्वादश डीबी उधर का मेला,
अलख मटी तहां गंग न समाय ।
सोना रूपा गिरहा कूं दीना,
यो जोगारंभ तहां सिद्ध समाय ।
आदि पत्र ले ईश्वर को दिया, आदि धर्म स्वर्ग तप नाथ ।
बारह वर्ष का भूहा मसान, गोरखनाथ जगाया ।
चौसठ योगिनी भिक्षा पूरे, अनंत सिद्धां आदि पत्र पाया ।
आदि पत्र आदि उत्तम अनादि धर्म शंकर कूं पेश ।
नुगरा कूं गड़बड़ बोलिए, सुगरा कूं उपदेश ।
एता एक अवधू पंच तंत मात्रा का विचार ।
अनंत सिद्ध तहां सुनिया विचार ।
मच्छंद्र प्रताप यति गोरख कहे,
ते अवधू पंच मूं आतमा लहे ।

जे जोगी पंच मात्रा का जाणे भेव,
सो आपे करता आपे देव ।
पंच मात्रा जोगी बूझे, ताकूं सकल देवता त्रिभुवन सूझे ।
।। इति पंच मात्रा समाप्त

❋ अथपंच अग्नि कथन ❋

ओऊँ मूल अग्नि का रेचक नाव,
सो पीले रक्त पात अरु भाव ।
पेट पूठि दोऊ सम रहे, ते मूल अग्नि यति गोरख कहे ।१।
भूयंगम अग्नि का भूयंगम नाम, तजिबा भिक्षा भोजन गाम ।
मूल की मूल अमीरस धीर,
तिस कों कहिये सिद्धों पवन शरीर ।२।
ब्रह्म अग्नि ब्रह्म नाला, धरि लेऊँ जान लठत पवना ।
रवि शशि गगन समान ।३।
ब्रह्म अग्नि मधि सिकबा कपूर,
तिस को देखि मन पवन जोईबा दूर ।
शिव घर शक्ति अहि निशी रहे,
ब्रह्म अग्नि यति गोरख कहे ।४।
काल अग्नि तीन भुवन प्रवीनी, उलटत पवन सोखत पानी ।
खाया पीया वाक हो रहे, काल अग्नि यति गोरख कहे ।५।
रुद्र अग्नि का त्राविक नांव, सोखि लेय नदी सिंधु जल गांव ।
उलटत केश पलटे चाम, योगाग्नि हैं ताका नाम ।६।

ज्ञान अग्नि को उलटि अबाध,

संयम खिवत योग युक्ति का साध ।

ज्ञान अग्नि भरपूर रहे, सिद्ध संकेत यति गोरख कहे ।७।

पूरब को पीवत वायु कुम्भ की काया शोधन ।

रेचक तजत विकार, आटिको आवागमन विवर्जित ।८।

सिद्ध का मरन कोई साधु जाणे पंच अग्नि गोरख बखाणे ।

पांचों अग्नि सम्पूर्ण भई,

अनन्त सिद्धों में यति गोरख कही ।९।

।। इति पंच अग्नि समाप्त ।।

❋ अथ शिक्षा दर्शन ❋

अवगति ते उत्पत्ति ओऊं, औऊँ उत्पत्ति ते आकाश ।

आकाश उत्पत्ति ते वायु, वायु उत्पत्ति ते तेज ।

तेज उत्पत्ति ते तोया, तोया उत्पत्ति ते पृथ्वी ।

मही रूप देवी का रंग, जल रूप ब्रह्म का वरण ।

तेज रूप विष्णु की माया, पवन रूप ईश्वर की काया ।

आकाश रूप नाद की छाया, नाद रूप अवगति उपाया ।

शून्य निरंजन भूचर देव, भूचर का नहीं पाया भेव ।

अकल अगोचर अनंत साखी सा राम भेद,

परम भेद भेदानि भेद ।

आतमा ध्यान ब्रह्मज्ञान खेचरी मुद्रा,

भूचरी सिद्धि चाचरी निद्धि ।

अगोचरी बुद्धि उनमुनी अवस्था,
अभय करामात अतीत देवता।
अवगति पूजा अनिले आश्रम,
अध्यात्म विद्या पद्म आसन।
अमृत प्याला, मनसा माई, पंच भूचेला, मन रावल।
पवन भोगी, दशवें द्वार, प्राणनाथ जोगी,
सहज आंवणा अवधू।
संयम जीवणा, समता नदी,
निः केवल जल, त्रिवेणी स्नान।
त्रिकालक संध्या अजपा गायत्री,
अनूप मन्त्र, निरंजन माला।
निराकार ज्वाला छः सौ सहस्त्र इक्कीस करि मेला।
नख सिख पवना वाधिवा मेला।
नाद अनाहद निः शब्द वाणी,
जीवते शीव ब्रह्म होइबा प्राणीं।
देही विदेही अविचल धीर, रुधिर पलट फिर होइबा खीर।
दृष्टि वदिष्ट जोईबा नैन, पवन निरञ्जन बोलिबा वैन।
शब्द निः शब्द होईबा थूल, आदि का अनादि होइबा मूल।
नाद बिंद गाईबा गगन आकाश,
ना बढ़े घटे ना होई विनाश।
धरणी गगन पर मारग न कोई, जे चले तहां काल न होई।

अखण्ड मढ़ी जहां जोइबा ध्यान,

जुग जुग तालि कथिबा ज्ञान ।

मूल चक्र तहं पलटे जिद, पलट काया थिर होई कन्ध ।

मूल बंध वज्र कछोटा पकड़िबा धीर,

मति उडीणो बंधिबा बीर ।

जत जो गोटा आसन पूर, अमृत धारा कमण्डल होइबा सूर ।
ओं भया ने पाया नीर, चेतना विभूति अंग शरीर ।

अजर कंथा नहिं वाद विवाद, अनहद बाद महारस स्वाद ।
संतोष तिलक महर निरवाण, करि एकता हरिबा प्राण ।
मन बैरागी मन जोइबा रूप, बदत गोरख ए तत अनूप ।

दया दण्ड तहां त्रिकुटी ध्यान, क्षमा लाठी टेकेबा मान ।
चन्द सूर दोई जाइबा धार, फेर गगन तहां भे मति वार ।
ते जोगी जग जुगता, अविचल सार स्वछद मुगता ।
भै भ्रम पार बोई पीछे ब्रह्मण्ड बंदिया पूर,

गुरु शब्द अनाहद मानव सूर ।

अनन्त सिद्धां तहां सारमसार ।
निश्चल थिर तत निराल, अयाचिक भिक्षा अईबा थान ।
गुरु मच्छंद्रनाथ शिक्षा पदरिबा कान ।

अकल पडी बीझोली निरास, संजीवन मात्रा बीज नास ।
एकंत रहबा बंचबा सूल, आवा गवन का न होईबा मूल ।

बारा कला देवी सोलह कला देव,

सुषुम्ना नाड़ी बंधिवा भेव ।

नौं सौ जौगण चलाइबा साथ, बुरजि बहतर जगाइबा नाथ।

नव खण्ड पृथ्वी मांगबो भिक्ष्या,

त्रिलोक मेदिनी होइगी ऊपक्ष्या ।

चौदह ब्रह्मंड जहां जोइवा हार, षट दर्शन ए पंथला सार ।

दार बहनी ज्युं होइबा भेव, असंख पंखुड़ी गगन करी सेव ।

वदत गोरखनाथ अविचल जाप,

लिपे नहीं तहां पुण्य न पाप ।

शून्य ध्यान सोलह कला माला

आपन शंभू गोरखनाथ बाला ।।

।। इति शिक्षा दर्शन समाप्त ।।

❋ अथ अष्ठ मात्रा कथन ❋

प्रश्न—

स्वामीजी अष्ट मुद्रा बोलिये, घट भीतर ते कौण कौण ?

उत्तर—

अवधू मूलनी मुद्रा ई का नाम, ब्रह्मा ले उतपनो काम ।

पार ब्रह्मा समोकृत्वा मुद्रा तो भई मूलनी ।

नाभी मध्ये जलश्री मुद्रा काम क्रोध ले उत्पन्नि,

काम क्रोध समोकृत्वा मुद्रा तो भई जलश्री ।१।

हृदय मध्ये सीरनी मुद्रा ज्ञान दीप ले उत्पत्ति ।
ज्ञान दीप समोकृत्वा, मुद्रा तो भई सीरनी ।२।
मुख मध्ये खेचरी मुद्रा, स्वाद विस्वाद ले उत्पति ।
स्वाद विस्वाद समोकृत्वा, मुद्रा तो भई खेचरी ।३।
नासिका मध्ये भूचरी मुद्रा, गंध विगंध ले उत्पति ।
गंध विगंध समोकृत्वा, मुद्रा तो भई भूचरी ।४।
चक्षु मध्ये चांचरी मुद्रा, दिष्टि विदिष्टी ले उत्पति ।
दिष्टि बिदिष्टि समोकृत्वा, मुद्रा तो भई चांचरी ।५।
श्रवण मध्ये अगोचरी मुद्रा, शब्द कुशब्द ले उत्पति ।
शब्द कुशब्द समोकृत्वा, मुद्रा तो भई अगोचरी ।६।
ब्रह्माण्ड मध्ये उनमनि मुद्रा परम ज्योति ले उत्पति ।
परम ज्योति समोकृत्वा, मुद्रा तो भई उनमनि ।७।
इति अष्ट मुद्रा जाणे भेव, आपे करता आपे देव ।

।। इति अष्ट मुद्रा समाप्त ।।

❋ अथ अष्ट चक्र कथन ❋

ओऊं गोरखदेव अष्ट चक्र घट भीतर बोलिए ते कौण कौण ?
अवधू प्रथमे आधार चक्र बोलिए,
गुदा स्थाने चतुर्दश कंवल, षट् शत स्वास ।१।
तिस चक्र उपरि इष्टि चक्र,
लिंग स्थाने षट् दल कंवल षट् सौं स्वांस ।२।

तिस चक्र ऊपर मणिपुर चक्र,

नाभि स्थाने, दश दल कँवल।

षट् सौ स्वास।३।

तिस चक्र ऊपर अनाहद चक्र मध्य स्थाने द्वादस कँवल।

षट् सौ स्वास।४।

तिस चक्र ऊपर विशुद्ध, चक्र, कण्ठ स्थाने, षोडस कँवल।

सहस्त्र अजपा गायत्री पारब्रह्म ध्यान।५।

तिस चक्र ऊपर अग्नि चक्र नैत्र स्थाने, षोडस दल कँवल।

सहस्त्र स्वास।६।

तिस चक्र उपर गिनान (ज्ञान) चक्र ब्रह्माण्ड स्थाने,

एक सहस्त्र दल कमल, एक सहस्त्र स्वास।

अजपा गायत्री पारब्रह्म ध्यान।७।

तिस चक्र ऊपर सूक्ष्म चक्र, शुन्य स्थाने,

इक्कीस सहस्त्र कँवले।

इक्कीस सहस्त्र स्वास एवं अष्ट कँवल का जाणै भेव,

सो आपे करता आपे देव।८।

॥ इति षटचक्र वर्णन समाप्त ॥

यहां पर रात-दिन के स्वासा प्रमाण से षट् चक्र साधना विधि से भिन्न चक्र सिद्धि क्रम से दैनिक साधना की प्रणाली देते हुए दर्शाया है कि नित्य प्रातः साधक को नियम से नियत जप से चक्र जागृति होती है। टीकाकार

❋ अथ नरपै बोध कथन ❋

सुण हों अवधू शुद्ध बुद्ध का विचार,
पांच तत्त ले उतपना संसार।
पहले आरम्भ घट परचा करो,
निस्पति नरपै बोध कथत यति गोरखनाथ।१।
दूजे आरंभ काम क्रोध अहंकार,
मनसा माया विषय विकार।
हंसा पकड़ गात जिन करो, तृष्णा तजो लोभ पर हरो।२।
छांडो द्वंद रहो निरद्वंद, तजो अलंगन रहो अबंध।
सहज जुगति ले आसण करो,
तन मन पवना दृढ़ करि धरो।३।
संयम चितवों जगति अहार, निद्रा तजो जीवन का काल।
छांड़ तजूं तत मन बदंत, मंत्र गोटे का घात पाखंड।४।
जड़ी बूटी का नाम न लेस्यूं,
राजा दरबार पाव जिनि देस्यूं।
थू भ्रम मोह न बस कर छाड़ो,
सकल आभरण स्वर कर मांडो।५।
सकल विद्या वा जग दास, ब्रह्म विधि लग टारंभ वास।
अपना मनवा उलटा धारे काम क्रोध अहंकार जारे।६।
जिन महारम फिरो जिन जिन देश,
जटा भार बांधों मत केश।

रू ंख बूटी जड़ी ना करो

गिरी पर्वतां चढ़ि प्राण जिन हरो ।७।

पूजा जप तप कू जिन जापे, जोग मांहि बैठावो आपे ।

वेद विराज छांडे कुव्यवहार, पढ़िबा गुणिबा, लोकाचार ।८।

बंधु चेला का संग निवार,

अणिमादि मसाण बाद विव टार ।

एको एका रमो भूआल, एता कहिए ए प्रति काल ।६।

सभा देखि मांड भू ंजनि ज्ञान, गू ंगा गहला हो दूर अजान ।

राव रंक की छाड कू आस, भोजन भिक्षा भयऊ उदास ।१०।

सींगीनाद पयाणा दंभू देव कला काल खिन लेभू ं ।

बग ज्यू ं ध्यान माड़ि सद रहो,

श्वान जति को निशि गहो ।११।

रस रसायन गोटिका निवारो,

रिद्धि पर हरो सिद्धि लेऊं विचारो ।

पर हरो सुरापान अरु भंग ताते उपजे रंग बिरंग ।१२।

नारी सारी की गरो, ए तीनू ं सतगुरु परहरो ।

इति नरप बोध कथत, यति गोरख यू ं भखत ।१३।

।। इति नरप बोध समाप्त ।।

❀ अथ आत्म बोध कथन ❀

ओऊँ आसन करि पद्मासन बांधि,

पछिले आसन पवना सांधि ।

मन मुरछावे लावे तारा, गिगन शिखर जले अंगारा ।१।
प्रथम बैठ वायु दरि बंध पवना खेले चौसठ संध ।
नव दरवाजा लावे ताला, दशवां मध्ये होय उजाला ।२।
ऐसा भूयंगम योगी करे, धरती सोषे अंबर भरे ।
गगने स्वर पवने स्वर लाणी,
धरती का पाणी ले अंबर आणी ।३।
ता जोगी की जुगति पिछाणी,
मन पवना ले उनमुनि आणी ।
मन पवना ले उनमुनीं रहै, तो काया गरजे गोरख कहै ।४।
चढे महारस अमरा भरे, आरंभ योगी अमृत झर हरे ।
योग रीति खेले ब्रह्मण्ड, मन पवना संग खेले खण्ड ।५।
उलटे चंद राहु कूं गेहे, सूरज उलट केला संग देहे ।
चंद धरा सूरज थिर रहे, तत जाण योगेश्वर कहे ।६।
धृति योग चंद उरध गहे, द्वादश पवना उनमुन रहे ।
अनहद सवाई धुनि बाजे, पश्चिम द्वारे पवना गाजे ।७।
अमि अंतर ब्रह्म अग्नि प्रजारे, पंच चोर ले ज्ञान संभारे ।
जोगी अनुभव धर दिवला दिपे,
ता जोगी की काया काल न छिपे ।८।
हलि हलि पवना काया गरजे, सूरा होय अमि अंतर जूझे ।
ज्ञान खडग ले जूझबा द्वार,
अजीत जीतबा पंच गहि सार ।९।

अष्ट पर्वत असाधि साधिबा,

नौ दरवाजा दृष्टि करि बांधिबा।

दरवाजे दशवें कूंची सार मैं मत हस्ती बोध्या बार।१०।

भीतर राजा जूंझण हार, चहूं दिश जाता राख्या मार।

राजा झुके बिषमी घाई, मन पवना ले रह्या समाई।११।

मन पवना की विषमी संधि, चंद सूर दोऊ सम करि बंधि।

नो सै निबासी सायर सोखे,

जोगी सोखि सदा भरि पोखे।१२।

बिन पुस्तक बांचिबा पुरान, सरवस्ती उचरै सों ब्रह्मज्ञान।

अजरा सोखे बजर करे, सर्ब दोष काया ले हरे।१३।

खेरे सोखे लावे बंध, तो अजरावर थिर होय कंध।

सोखे पोखे जाले बाले, अहिनिशि ब्रह्म अग्नि प्रजाले।१४।

ब्रह्म अग्नि पाप को खाय, संधे संध पवन लुकाय।

मन होय धीर धार लहे पवना,

शिवपुर जाता बरजे कवना।१५।

ब्रह्मशार सोखे बंधई जिद खीर सागर सोखे अजरावर कंध।

अजरा सोखे बजर करे, रोग व्याधि क्षुधा सव हरे।१६।

जड़ी बूटी भूलो मत कोय, पहले रांड वैद्य को होय।

जड़ी बूटी जे अमर करे, वैद्य धनवन्तरी काहे मरे।१७।

सोने रूपे सोझे काज, तो क्यों राजा छोड़े राज।

पसवा होय जपे नहीं जाप,

सो पसवा मोख क्यूं हो जात ।१८।

रिद्धि सकेले रोलानी धरे, गुरु न खोजे मूरख मरे ।

रोलानी आगे बैठा फूल, गुरु का वाचा गया जु भूल ।१९।

अकल पूर सके सकल निपाव, मीठा बोले झूंठा भाव ।

सत बोले सतवादी लोग, झूंठ बोले महापापी ।

देखत भोंदू बिषया खाई, झूठा बोले मर मर जाई ।२०।

जैसा करे तैसा फल पाय इकोतर से पराया नरक ले जाय ।

एक पुरुष बहु भांति नारी, सर्व निरंतर आतम सारी ।२१।

सर्व निरंतर भरपूर बहिया, आतम बोध सम्पूर्ण कहिया ।

पापे पुण्ये लिपे नहिं कोई, गोरख साधे मुक्ति होई ।२२।

।। इति आतम बोध कथन समाप्त ।।

※ इति श्री गोरख बोध ग्रन्थ समाप्त ※

※ ※

।। ॐ ।।

※ अथ भजनमाला प्रारंभ ※

※ राग कान्हड़ा -तिथि योग वर्णन ※

बन्दे गोरख एकंकार, सोलह तिथि का करूं विचार ।टेर।

अमावस आसन दृढ़ होई, आतम परचे मरे न कोई ।

मूल सहस्त्र पवना फिरे, बंक नाल नव बहतरि भरे ।१।

पड़वा बहे आपछि को आदि, सतगुरु शब्दा सहज समाधी ।
गगन मंडल मैं रहे समाय, चारों युग हेली हल जाय ।२।
द्वितीया है दोऊ कुल उधरण धीर,
उनमुन पवना अचल शरीर ।
बाहर भीतर एकंकार, गुरु प्रसाद भये निधि पार ।३।
त्रितिया त्रिवेनो करो स्नान, पाप पुण्य दोऊ देओ दान ।
सब योग युगति पावो विश्वास,
जरा मरण नहीं कंध विनास ।४।
चौथ चंचल निश्चय करो, काल विकाल दूरी पर हरो ।
जम जोरा का मरदां मान, सतगुरु कथिया पद निरवान ।५।
पांचम पंच तंत की संध याता मंगल रालो बंध ।
अमीरस धारा छिन छिन पीवो,
गुरु प्रसादे जुग जुग जीवो ।६।
छट्ठ षटचक्र विचारो सार,
रिद्धि सिद्धि बुद्धिमती अखिल भंडार ।
अर्थ द्रव्य की छांडो आस, काया कामनी भोग विलास ।७।
सातम सत रज तुम गुण बंध, पावो जनम मरण का संध ।
अबोहड़ अजर अमर पद लहो,
मन पवना ले उनमुन रहो ।८।
आठम अष्ट भैरों नौ नाथ,
अनंत सिद्धां सूं मिलया सवाणी बात ।

ओ अचंभा कथ्या न जाय, करत महारस गगन समाय ।९।
नवमी नव सिद्धि काया संभारि, पाप पुण्य देखो पटतारि ।
बूढ़े पाप तिरे सत धरम, काया बाहर जात न जनम ।१०।
दशमी दश दिश लागे बंध, जत सत संयम थिर होय कंध ।
धरम करम गुरु वाचा चीन,

ज्ञान विचक्षण वाणी बीन ।११।
एकादशी एकादश रंग, रुद्र इंद्रियां पाया काया संग ।
भेंटया देव दरस्या देवा, आप पुजारी आप ही देवा ।१२।
द्वादशी तिथि कर पूरे द्वार, द्वादश दिनकर तप सूझै सार ।
तहां चढ़ि भैरूं रहा समाय,

सतगुरु कथ्या ज्ञान अभाय ।१३।
तेरस त्रिकुटि सम करि मेल,

चंद सूर दोऊ धुनि करि मेल ।
एक सिद्ध रूंधा नव घाट, सतगुरु खोजे ऊभा बाट ।१४।
चवदश चवदह रतन विचार,

काल विकाल आवे ताहि निवार ।
आपै आप देखो पटतारि, उत्पति प्रलय काया मकारि ।१५।
पूनम पूगी मन की आस, आया मोह तजि भये उदास ।
सोलह कला सम्पूर्ण चंद, गुरु प्रसादे थिरके कंध ।१६।
सोलह तिथि कला की संध, मचछंद्र प्रसाद थिर भया कंध ।
अरा धीर जब आछे थीर, अनंत सिद्ध तहां गोरख पीर ।१७।

राग कान्हडा, चौपाई सप्तवार (२)

जोग सुलग ही बारम्बार, सतगुरु शब्दां सहज विचार ।टेर।
आदि ते शोधो आवागमन, घट में राखो दृढ़ करि पवन ।
दशवें तो शिव पूजा द्वार, तो गुरु पावो आदित वार ।१।
सोमवार मन धरिबा शुनि, निश्चल काया पाप न पुनि ।
शशिहर वर्षे अपरम्पार, सोमवार गुण दूताकार ।२।
मंगल विषमी माया बंध, चंद सूर दोऊ सम करि संघ ।
जरा मरण बचो भौ काल, तो गुरु पावो मंगलवार ।३।
बुद्धवार गुरु दीनी बुद्धि, व्यारो काया पावो सिद्धि ।
शिव घर शक्ति पाणी भरे, तो बुधवार गुण एता करे ।४।
बृहस्पतिवार विषम मन धरो, पांचू इन्द्रिय निग्रह करो ।
शंखणी शोधो पवना द्वार, तो गुरु पावो बृहस्पतिवार ।४।
शुक्रवार शोधिबा शरीर, कहां बसे हंस कहां बसे खीर ।
नव बहतर पवना बहे, शुक्रवार कोई बिरला लहे ।६।
थावर थिर करि आसन देय, बारह सोलह मन करि लेय ।
शशि हर के घर आवे भान, ता दिन थावर गंग समान ।७।
सातों वार पार के राशि, काला भैरू घाल्या पाशी ।
पेड़े प्राणी परचा भया, सप्तवार यति गोरख कह्या ।८।

राग चौपाई नोग्रह कथन (२)

सात वार ग्रह नौ का खोज,
आपा लखे फकर अनुभोज ।टेर।

आदितवार ज्ञान का ताप, आवै ब्योरत पुण्य न नाप।
दोउं पक्षां सूं आरंभ करे, अनुभव करि जमपुर पर हरे।१।
सोमवार से संगठन भरो, सतगुरु खोजो दुस्तर तरो।
दशवें द्वारे दीजे बंध, अजराबर थिर होय कंध।२।
मंगलवार म्हें पाया भेव, आतमा पाछे निरंजन देव।
पंच पुहुप ले पूजा करे, मति बुद्धि ले शिवपुरी संचरे।३।
बुधवार मति बुद्ध प्रकाश, अहिंनिश रहबा जोग अभ्यास।
दृढकर लोचन अन आशा पाश,

सिद्ध साधो अमरापुर वास।४।

बृहस्पतिवार विषम गढ लिया, ज्ञान खड्ग ले विहंगं किया।
अभूंठ कोट दल दिया पयाना,

यम मस्तक बाजे निशाना।५।

शुक्रवार सूक्ष्म जल साधि, लहर न परसे सहज समाधि।
माया मार कर अस्थिर होय, आत्म परचे मरे न कोय।६।
थिर थावर शनिश्चर बार, काया भीतर सातों बार।
सतगुरु खोजो उतरो पार, सुषुम वेद सुषुमना विचार।७।
वेद पुराण पढ़े चित लाई, विद्या ब्रह्म कहां थिर थाई।
मछंचद्र प्रताप यति गोरख कहे, सप्तवार कोई विरला लहे।

आदित आंख्या सोम श्रवण, मंगल मुख प्रवाण।
बुद्ध हृदय बृहस्पति नाभि, शुक्र ते इन्द्रि जाणय।८।

शनि गुदा वायु राहु ते मन केतु ते नासिका रहे ।
सप्त वार नौ ग्रह देवता, काया भीतर कहे ।१०।

राग आसावारी पद (४) कान्हड़ा चौपाई

मारो मारो सर्पनीं निरमल जल पेठी
त्रिभुवन डसतां गोरख दीठी ।टेर।
मारल्यो सर्पणीं जगाई ल्यो भंवरा,
जिन मारी सर्पणीं ताको कहा करे जोरा ।१।
सर्पणी कहे मैं अमला मलिया,
ब्रह्मा विष्णु महादेव छलिया ।२।
माती २ सर्पणी दशूं दिश धावे,
गोरखनाथ गारडू पवन बिगलावे ।३।
सर्पणी कहे झूंपरी निगूती, जाज्ञा गोरख झूंपड़ी सूती ।४।
आदिनाथ नाती मच्छंदर नपूता,
सर्पणी मारी गोरख अवधूता ।५।

राग कान्हड़ा—चौपाई पद आशा (५)

बांधो २ बच्छड़ा पीयो २ खीर,
कलि अजरामर होई शरीर टेर।
बारह बच्छड़ा सोलह गाई, धेनु दुहावत रेण बिहाई ।१।
अचराचर धेनु कचरा न खाई,
पांच ग्वाला याकूं मारण धाई ।२।
आकाश का धेनु त्रिभूवन का राया,
सींग न पूंछ वाके खूर नहीं काया ।३।

इन सुरही का दूध जु मीठा,

पावे गोरखनाथ गगन बैइठा ।४।

राग आशावरी (६)

मनवा राजा जायलो कौनसी घाटी,

आगे है भरम की टाटी ।टेर।

कौन दिशा न आई मन पवना, कौन दिशा को जासी ।
कौन दिशा न भजन उबरिया, कौन दिशा रम जासी ।१।
अगम दिशा से आई मन पवना, पश्चिम दिशा ने जासी ।
बंकनाल से भजन उबरिया, ररणंकार में रम जासी ।२।
ऊंची नीची सुरता कर न, चंदा जोत रहवासी ।
तत्व नाम को तेल पूर ले, जगा करे दिन राती ।३।
बारह आंगुल सींवता; सोलह अंगुल फाटी ।
सवा हाथ रो भंगवा चोलो, त्रिवेणी री घाटी ।४।
दीपक में एक दीपक दरशे, दीपक में एक झांई ।
झांई में परछांई दरशे, वहां ही है मेरा सांई ।५।
भणत मचछंदर सुण जती गोरख, जात हमारी तेली ।
तेल तेल सो काढ़ लिया, है, खल बलदां ने मेली ।६।

राग पद (७)

बोलता नजर नहीं आया गुरुजी,

ज्यां के चोंच पांख नहीं काया ।टेर।

बिन पाल इक सरवर भरिया, नीर नजर नहीं आया ।
मेरे सतगुरु ऐसे सैलानी, वहां बैठ मल २ न्हाया ।१।

बिना पात एक तरूवर देख्या फूल नजर नहीं आया ।
मेरा सतगुरु ऐसा सैलानी, वहां बैठ फल खाया ।२।
बिना पांव एक हस्ती देखा, शीश नजर नहीं आया ।
मेरा सतगुरु ऐसा बहुरंगी, अंकुश मार छुटाया ।३।
एक जोगी के पांच पुत्र है, पच्चीस जोगण लाया ।
एक अचम्भा ऐसा देख्या, बेटी ने बाबल जाया ।४।
जोगी एक किले से उतरा, संग लिए चारूं चेला ।
चारों ने यों जग भरमाया, जोगी रमे अकेला ।५।
धरती जाजम तम्बू असमाना, सत का सूरज बणाया ।
कहे मछन्द्र सुण जती गोरख, दुनियां दुरंगी बणाया ।६।

राग पद ८

चौसठ कला में खेल हमारा, और वारता सब झूंठी ।टेर
हर भज हर भज हीरा परखले, समझ पकड़ थारी मजबूती ।
लागी लगन मत छोड़ो साधो,
गांठयां घूली है रेशम की ।१।
सत सुमरण का सेल बणाले, ढाल बणाले धीरज की ।
काम क्रोध ने मार हटादे, जद जाणू तेरी रजपूती ।२।
पांचू चोर बसे काया में, उनकी पकड़ो शिर चोटी ।
पांचा ने मार पचीसूं बस कर,
जब जाणू तेरी बुद्ध मोटी ।३।
इन्द्र घटा ले सतगुरु आया, अमृत बूदां हद बूटी ।
त्रिवेणी का रंग महल में हंस ले लालां हद लूटी ।४।

रुण झुण रुण झुण बाजा बाजे,

झिलमिल झलके वा जोती ।

ऊँकार का सोहंगकार में, हंसला चुगता निज मोती ।५।

पक्की घड़ी का तेल बणाले, कांण न राखो एक रती ।

कहे मछंदर सुण जति गोरख,

अलख लखा सो खरा जती ।६।

राग आशावरी (६) पद

साधो भाई ! गगन घटी चढ़ जाणा ।

सहजे सुमरण करो अलख का सोई अमर कहाणा ।टेर।

मूल कंवल में गणपति देखो, नाभि कंवल शक्ति बाणा ।

षट् चक्र में निरंतर बासा, सावित्री का जाणा ।१।

त्रिकुटी पे सुमरण कीना उनमुन तार लगेना ।

उलटो षट् कर्मन को सोधे, योगी मुक्ति लखे ना ।२।

मेरु दंड जहां चक्र सुधाना, जाको लखता संत कोई ज्ञाना ।

प्रेम भक्त आनंद में राचे, अलख लख्या सोई ध्याना ।३।

त्याग करो तो ऐसा कीना, वचन मान परवीना ।

झीणा झीणा बाजा बजता, लखता संत सुजाना ।४।

अमर लोक एक है काया में, जोगारंभ अलख लखाणा ।

निर्भय आप अमर कर दिया, तब ही देश दिखाणा ।५।

कहे मचछंद्र सुण यति गोरख, मोहि भर २ प्याला पाना ।

जनम मरण कछु व्यापे नाहीं, नहीं काल भय खाना ।६।

राग पद (१०)

नगर में रमता जोगी आया,
ज्यांकी पारख बिरला पाया ।टेर।
रंगां न रेखा पाव न भेखा, उनमुन ध्यान लगाया ।१।
किण घर आता किण घर जाता, किण घर फेरी देता ।२।
कुण संत ज्ञान ध्यान में बैठा, जोगाभ्यास बतलाया ।३।
पांचू पुरुष पचीसों नारी, एक जोगणी जाया ।४।
शुन्य शिखर पर बालूड़ो खेले, सम्मुख दरशण पाया ।५।
मच्छंद्र शरण जती गोरख बोल्या, अगम संदेशा लाया ।६।

राग कोयारी (११)

का बूझे अवधू गगन धरणी,
चंद न सूर दिवस ना रहणी ।टेर।
ऊंकार निराकार सूक्ष्म स्थूल, पेड़ न पत्र न फूल ।१।
ज्ञान ध्यान जोग न जुक्ता,
पाप न पुण्य न मोक्ष न मुक्ता ।२।
उपजे न विनसे न अखेह न जाई,
जरा मरण ना व्यान न माई ।३।
गोरख भणे मच्छंद्र दासा,
भाव भक्ति और आसण पासा ।४।

राग आशावरी (१२)

देखो मेरे साहब ने कुदरत कीनी,
काया विच बाग लगाया है ।

ऐसा ऐसा भरत भराया सतगुरु,

सप्त धातु पिंगलाया है ।टेर।

सात आठ क्यारी जो धोरा, बाग जुगत कर पाया है।

बागवान बागां में बैठा कली कली रंग न्यारा है ।१।

इंद्रलोक से घटा घिर आई, शब्द पियाले गुरु लाया है।

बंकनाल बरसाई मेरे सतगुरु, सोपां समुद्र भराया है ।२।

बाया बीज सकल में वरता, बीजां बगरा छाया है।

रणूंकार का सींचा गेला, जब छेड़या गरणाया है ।३।

जिस घर मांही हंसा आया, उसका ही गुण गाया है।

मच्छंद्र शरणे जति गोरख बोल्या,

एक अखंडी ध्याया है ।४।

राग आसावरी (१३)

अवधू ! मन मेरा मतवाला ।

उनमुन चढयो गगन रस पीवे, है त्रिभुवन उजियाला ।टेर।

गुड़ कर ज्ञान ध्यान करि महुआ, भौरो माटी भारा ।

सुषमण नारी सहज समाना, पीवेगा, पीवन हारा ।१।

दोऊ कर जोड़ चिताई माटी, चुवे महा रस भारी ।

काम क्रोध दोऊ किया पलीता, छूटी ममता सारी ।२।

त्रिकूटी कोट में मृदग बाजे, तहां मेरा मनवा नाचे ।

गुरु प्रसाद अमर फल पाया, सहज सुषुमना काछे ।३।

पूरा मिले सभी सुख उपजे, तप को ताप बुझाणी ।
गोरख कहे भव बंधन छूटे, जोत में जोत समाणी ।४।

राग आशावरी (१४)

छोड़दे मनवा मन मस्ती, सोहं शिखर गढ है बस्ती ।टेर।
इला पिंगला अर्धंग नारी चांद सूरज घर रह लगती ।
गंगा जमना बहे सरस्वती, स्वास स्वास, की वहां गिणती ।१।
अष्ट कमल में अलख बिराजे, रंग महल में रहे सगती ।
चौबारा में दीपक जलता, वहां पे सुरता रहे जगती ।२।
हिये उतार हाथ धर लेणा, शीश उतार करो कुश्ती ।
पांच तत्त गुण, तीनूं भेला राखो,
जबर धणियांरी है जपती ।३।
इसी नगर में डंका लागे, साध सुणे कोई विरला सती ।
झालर शंख पखावज बाजे, जिण बिच केलि करे हसती ।४।
गोरखनाथ मुक्ति के दाता, पल पल सुमरे पारबती ।
शरण मचछंद्र गोरख बोल्या,
अलख लख्या सो खरा जती ।५।

राग पद (१५)

अवधू ! भरया समुन्द्र में मगर रहत पियासा ।
साध बूझे योग युक्ति, कहां है जल रा वासा ।टेर।
एक अचम्भा देख्या इसड़ा,
मिश्री फिर फिर बूझे है मीठा ।१।
एक अचंभा देख्या बूझा, देवल कहे कहां चढ़ती पूजा ।२।

एक अचंभा देख्या तीजा, बादल में कहां रहती बीजा ।३।
एक अचम्भा देख्या चौथा, दादा गोत मिल पूछे है पोता ।४।
गोरख बोले मच्छंद्र पूता, ममता मार भया अवधूता ।५।

राग पद (१६)

अब गुरुजी मिले महा ज्ञानी,
ज्यांसू पाई मैं अमर निशानी ।टेर।
उपजे न बिनसे आवे नांहि जावे, नहीं जूझे नहीं हारे ।
जल की तरंग जलो जल रलिया,
अब कौरण तिरे कौरण तारे ।१।
जल मैं कुम्भ कुम्भ मैं जल है, बाहर भीतर पाणी ।
बिलश्या कुंभ जलो जल रलिया, आ गत बिरला जाणी ।२।
सई सूरत ने सेज घर आणी, सायर लहर समाणी ।
जीवर जाल डाल कर कलवे, मीन हुआ गल पाणी ।३।
गुरु बिन ज्ञान अनुभौ बिन कथणी,
ए सब मिथ्या कहाणी ।
कहे गोरख गूंगे की सेना, गूंगे होय कर जाणी ।४।

राग पद (१७)

सेवा म्हारी मानो गणपति देवा,
खोलो म्हारे हृदय का ताला ।टेर।
जल तो चढ़ाऊँ देवा नहीं है अछूता,
जल मछलियां विटोरिया ।१।

फूल तो चढ़ाऊं देवा नहीं है अछूता,

फूलों ने भंवरा बिटोरिया ।२।

दूध तो चढ़ाऊं देवा नहीं है अछूता,

दूधां ने बच्छड़ा बिटोरिया ।३।

भोजन चढ़ाऊं देवा नहीं है अछूता,

भोजन ने माखियां बिटोरिया ।४।

शीश तो चढ़ाऊं देवा नहीं है अछूता,

शीश को शक्ति ने बिटोरिया ।५।

दोय कर जोड़ यति गोरख बोल्या,

शब्द चढाऊं देवा यही है अछूता ।६।

राग पद (१८)

कर गूजरान गरीबी में रेणा है ।टेर।

चार खूट में फिरो भलाई, दिल रा भेद नहीं देणा है ।

गगन मंडल मैं गऊ बियाई, धरती मही जमाणा है ।

माखण माखण साधो खायो, छाछ सकल बरताणा है ।१।

मरदां संदी बांध दोस्ती, क्या तिरिया संग लागो है ।

पल में राजी पल में बैराजी, पल पल नार पराई है ।२।

नेण बांध समझाऊं जीव ने, घर घर पांव न देणा है ।

उण पाणी से रतन नीपजे, एला नहीं गमाणा है ।३।

फिर रह्या प्याला प्रेम का, प्यासा होय सो पीणा है ।

गुरु शरणे जति गोरख बोल्या गगन मंडल घर करणा है ।४

राग आरती (१९)

हरि हरि हरि हो रही आरती,
जय जय बोलो योगी आलम।
निर्भय नगारा बाजे अघड़ बम् बम् ।टेर।
तू ही है पटेल तू मेरो पटवारी,
तू ही मेरो मजोदा हाकिम ।१।
तू ही मेरो साहब तू ही मेरो सूबो,
मेरा भेद की तुझे मालम ।२।
चार खूंट चवदा भवन में सांची फिरे है तुम्हारी कलम ।३।
चार चरण यति गोरख बोल्या,
आपका हुकम मैं रहूं हरदम ।४।

राग मंगला (२०)

में थाने सिमरु गजानन देवा,
सरस्वती माय शारदा सिमरु, हृदय करो उजियाला जी ।
निद्रा निवारो भोला नाथ जी ।टेर।
जननी नहीं जायो उदर नहिं आयो,
गवरी को पूत कहायो जीओ ।१।
पानी से पतलो पवन से झीणो,
शोभा बरणी न जावे जीओ ।२।
हाथ घालूं तो म्हारे हाथ न आवे,
मुठियो में नाहि समावे जीओ ।३।

मच्छंद्र प्रताप यति गोरख बोले,

पत बाने वाली राखो जोगी ।५।

राग आशावरी (२१) आशा पद

साधो भाई ! योग अति अति झीनो ।
लखे कोई सतगुरु का बाला, रमज भेद कर चीनो ।टेर।
चार योग है कौन गुरुजी कहा योग फल कीनो ।
शास्त्र सार सिद्धान्त लखाओ, बंध भेद लख भीनो ।१।
हठ मंत्र राज लय चारों, वृति निरोध सुख लीनो ।
मूल जलंधर बन्ध साधले, सो, उडियान नवीनो ।२।
प्राणायाम युक्ति भेद को कहो, रीति परवीनो ।
कहा साधक का साधन मूल है ? समझ कहो मलहीनो ।
पूरक कुम्भक रेचक भेद ले, अभ्यास वैराग वरीनो ।
रामप्रकाश गोरख मम गाढो, हो गोरख लख लीनो ।४।

राग आशावरी (२२) आशा पद

साधो भाई ! युक्ति योग कर जाना ।
मेरा महरम अटल अगोचर, योग रीति पहिचाना ।टेर।
यम नियम आसन कर युक्ति, प्राणायाम बखाना ।
प्रत्याहार धारणा धरकर, ध्यान रहस्य का पाना ।१।
निर्विकल्प खोज समाधी पूरण, भेद त्रिविध कर माना ।
जीव ईश्वर को करि एकता, साधन अष्ट चित्त लाना ।२।
अन्तस्थ चित्त वृति का संयम, दशवें देव दरशाना ।
मन पवना की गति विलानी, शब्द स्वरुप समाना ।३।

उत्तम गुरु गम उत्तम योग की, उत्तम सार परमाना ।
'रामप्रकाश' लखो गम गोरख, सो गोरख निरवाना ।४।

राग आसावरी (२३) आशा पद

साधो भाई ! सो गोरख निरधारा ।
गोरख को गम गोरख जाने, हो गोरख मतवारा ।टेर।
गो इन्द्रिय का रक्षक सोई, अपना आप लख प्यारा ।
गोरख को गोरख चेतावे, गोरख गम विचारा ।१।
गोरख साधक गोरख साधन, गोरख भेद अचारा ।
गोरख उलट समावे गोरख, गोरख का विस्तारा ।२।
गोरख रामप्रकाश अखण्डित, जो जाने मुक्त मझारा ।
रामप्रकाश को लखता गोरख, और न जाणन हारा ।३।
रामप्रकाश गोरख गति चीन्ही, भया गोरख अवतारा ।
गोरख मो में मैं गोरख में, आवागमन बिडारा ।४।

राग आशावरी (२४)

साधो भाई ! या विध योग विचारा ।
शील शौच एकान्त धारणा, संयम नियम अचारा ।टेर।
गुरु श्रद्धा कर युक्ति लाधी, बांधी पांच पसारा ।
पूरक ओहं सो कुंभक धीरज, रेचक पवन उतारा ।१।
इड़ा पलट के पिंगला लाया, सुषुमण भेद अट्टारा ।
पिंगला उलट इडा सम बैठी, क्रिया स्वास गम धारा ।२।
पल विपल त्राटक धुन साध्या, ररांकार रट प्यारा ।
युक्त त्रिवेणी मुक्त त्रिवेणी, बंध त्रिवेणी सारा ।३।

युक्त बंक से उतरया सीधा, मुक्त बंक चढ़ झारा ।
मुर्द्धा अमृत अखंडित धारा, पी अमृत निरधारा ।४।
नाभी नागनि मुख पलटाया, दशवें मैं रणंकारा ।
भंवरा गरज्या गगन मंडल में, जीव शीव इकसारा ।५।
जनम मरण का संशय काटया, मन पवना गम हारा ।
अपना आप निजानन्द परस्या, रामप्रकाश निज न्यारा ।६।

राग आशावरी (२५)

साधो भाई ! योग युक्ति कर शोधा ।
साधन धारण दृढ़ कर धारी, उपज्या जीवन बोधा ।टेर।
मन पवना का संग कर सुरता, त्रिकुटी महल में रोधा ।
ज्ञान-साधना शस्त्र साध्या, काम मार मद योधा ।१।
महा प्रबल मन वश करने में, गज कठिन नहीं गोधा ।
शब्द अंकुश अभ्यास सींकदे, लाया घेर घर खोधा ।२।
भया निशंका निर्भय डंका, लागा गमनां पौधा ।
फब कर बंका राव न रंका, पी रस मस्ता औधा ।३।
रामप्रकाश पहुंच्या घर आदू योग योग में सौधा ।
आदि आदि अनादि अपना, द्वैत भ्रम भवरोधा ।४।

राग कान्हड़ा तिथि योग वर्णन (१)

राग आशावरी (२६)

साधो भाई ! योग युक्ति कर जोई ।
फूल फकर का मारग चीन्हे, बेहद की गम सोई ।टेर।
पांचों साधे पांचो बांधे पांचों रांधे खोई ।
मुद्रा साधे इन्द्रिय बांधे, मल कामादिक धोई ।१।

तीनूं बंध प्राण गम तीनूं, नाड़ी तीन विलोई ।
युक्त मुक्त ओर बंक त्रिवेणी, लखे संत अनुभोई ।२।
गोरख की गम गोरख जाने, और न जाने कोई ।
संत लखे कोई फकर शूरमा, गुरु गम गोरख होई ।३।
अकथ कथे अनअक्षर बांचे रामप्रकाश निरभोई ।
सतगुरु मिले ते संशय तूटे, गूढ़ गति कहुं तोई ।४।

राग आशावरी (२७) पद

अवधू ! गगन हमारा वासा ।
इंड पिंड ब्रह्मंड पार में रहूं आप अविनाशा ।टेर।
षट् चक्र को वेधे शोधे, पहुंचे शिखर अवासा ।
कर्म भर्म में भूले डोले, मैं व्यापक सुखराशा ।१।
अकथ कथे कोई गुरु का बाला पावे स्वयं प्रकाशा ।
अन अक्षर का भेद पिछाने, द्वैत अद्वैत विनाशा ।२।
गगन मंडल में वास निरन्तर नहीं दूर नहीं पासा ।
योगी योग करे बेहद में, त्रिगुण तोड़ विलासा ।३।
अखंड अनामी बेरंग पूरण, नहीं ठाकुर नहीं दासा ।
रामप्रकाश परमानन्द चेतन नहीं तृप्त नहीं प्यासा ।४।

राग आशावरी (२८)

साधो भाई ! योगी योग कमावे ।
योग योग में रमझ अपेछी, लख परमानन्द पावे ।टेर।
मूल भ्रम का संशय छेदे, साधन लगन लगावे ।
आपा लखे खोज कर आपा, आवा गमन नहीं आवे ।१।

बेहद अनहद हद को छोड़े, उलटा पंथ चलावे ।
पांव बिना पथ चले अफूटा , नैन बिना दर्शावे ।२।
कान बिना बाजा सब सुणता, रण कार गरणावे ।
जिभ्या बिना गगनामृत अखवे, अभरा सभर भरावे ।३।
गावे ज्ञान ध्यान से ध्यावे, मरहम अपना लावे ।
रामप्रकाश गोरख घट मांही, बंधन सभी बिलावे ।४।

राग मांड आशा (२६) पद

योगी ! सो घर आद्र मेरा ।
पहुंचे बिरला सतगुरु का बाला, करै अगम घर डेरा ।टेर।
धरण गिगन बिन अधर सधर है, नहीं गुरु नहिं चेरा ।
भरिया लाल सदा भरपूरा, नहीं मेरा नहीं तेरा ।१।
इष्ट मुष्ठ बिन शुन धुन नाहीं, नहीं माया का घेरा ।
अपना आप और नहीं दरशे, नहीं दूर नहीं नेरा ।२।
गूंगा सैन लखे कर सोजी, सुरत शब्द कर हेरा ।
पूरण अपेजी अणघड़ चेतन, सो अनुभव निरभेरा ।३।
ध्यान योग की गति विलावे, योग होय जब सेरा ।
रामप्रकाश आप लख गोरख, नहीं चौरासी फेरा ।४।

राग आशावरी पद (३)

साधो भाई ! सत संगत कर पाया ।
भेद कल्पना दूर विडारी, अभय अमाप अथाया टेर।
गुरु कृपा कर साधन सोजी, अविद्या द्वैत विलाया ।
ईश्वर जीव ब्रह्म रुप पिछाण्या, अविद्या उपाधी माया ।१।

सत का सत से योग अनादि, दूर्मति दूर हटाया ।
असत असत का संशय मेटया मेटया आप अजाया ।२।
ज्ञान ध्यान के ऊपर डंका, निर्भय निशान घुराया ।
सदा निशंका रेख न अंका, अविगत अक्षय अकाया ।६।
त्रिगुण त्रिकुटी भ्रम मिटाया, सब थां पूरण थाया ।
रामप्रकाश शुद्ध तत निर्मल, गया रह्या ना आया ।४।

राग छंद भैरवी (३.१) पद

कोई शोधे मन हित लाय के षट् चक्र कर्म विचारा ।टेर।
गुदा स्थान में चक्र अधारा दल है चार अक्षर पुनि चारा ।
रंग तेज गणपति इष्ट प्यारा, जप संख्या छः सौ गायके ।
सतगुरु से भेद निहारा ।१।

उपस्थ वास चक्र अधिष्ठाना ।
षट् दल अक्षर षट् परमाना,
रवि सम रंग ब्रह्मा पति जाना । गुरु का बाल जपाय के,
जप संख्या छह हजारा ।२।
नाभी स्थान मणिपुर जानो, दल दश अक्षर दश ही मानो ।
रक्त वर्ण विष्णु पति आनो, जप सहस्त्र छह ठाय के ।
लख भिन्न भिन्न खेल आचारा ।३।

हृदय स्थान अनाहद देखो ।
दल अक्षर द्वादश सब लेखो, स्वर्ण रंग महादेव सु पेखो ।
जप सहस्त्र छह पाय के, तन मंदिर सोधो प्यारा ।४।

चक्र विशुद्ध का कंठ में वासा, दल अक्षर सोलह सुखराशा।
शशि सम रंग जीवात्मा पासा, जप एक हजार अचार के।
लख कली कली रंग न्यारा।४।
आज्ञा चक्र भृकुटी स्थाना, दो दल अक्षर दोय सुजाना।
रंग लाल गुरुदेव परमाना, जप एक हजार अथाय के।
कर सुरत शब्द इकधारा।५।
ब्रह्मरंध्र है दश में द्वारा, बिन अक्षर दल एक हजारा।
स्फटिक मणी रंग लख प्यारा, परब्रह्म का ध्यान लगाय के।
जप एक हजार उचारा।६।
मन पवना सुरति संग बांधे, कोटि जप युक्ति कर साधे।
ज्ञान ध्यान पथ इष्ठ आराधे, संत रामप्रकाश मनाय के।
सोई योगी हो निरधारा।७।

राग छंद भैरवी (३२) पद

कोई पूरा योगी गम पाय है, अष्ट साधन योग बिचारा।टेर।
अहिंसा सत्य अस्तेय सुधारे, ब्रह्मचर्य अंग भेद निहारे।
अपरिग्रह विधि कर धारे, तब यम साधन सुखदाय है।
सिद्ध होवे काम हजारा।१।
शील शोच तप कर्म अचारा।
सत स्वाध्याय प्रेम अंग प्यारा,
हो प्रणिधान नियम पंच धारा।
गुरु गम साधन सजाय है, नित इष्ट जपे हरिद्वारा।१।

साधन आसन भेद निहारा, विधि लाभ युक्ति पथ धारा ।
चौरासी में मुख्य उचारा, सिद्ध पद्मासन गाय है ।
कर पश्चिमोत्थान अपारा ।३।

इडा पींगला सूषुमरा सोधे ।
पूरक कुँभक रेचक रोधे, मूल उडियान जलँधर बंधे ।
लख पल विपल मनाय है, सब युक्ति भेद आचारा ।४।
खान पान निद्रा सम धारे, आलस्य औदासी दूर निवारे ।
युक्त अहार बिहार विचारे, कर प्रत्याहार जचाय है ।
सत साधन संगत धारा ।५।

गुरु मूर्ति पद इष्ट संभारे ।
सोहं शब्द में दृढ़ता धारे,
निश्चित समय आसन थिर मारे ।
नियमित योग उपाय है, घर साधन धरणा प्यारा ।६।
त्राटक मानस धुनि है संभारे, अक्षय शून्य प्रभा पति सारे ।
आतम चेतन एक विचारे, गति चढ़ ऋम कर आय है ।
कर ध्यान-इष्ट उजियारा ।७।

षट् चक्रयुक्ति कर साधे ।
षट् क्रिया गम मारग लाघें, पांच क्लेश निवृति बांधे ।
निर्विकल समाधि ध्याय है,
कोई सविकल समाधी न्यारा ।८।
उत्तम कर उत्तम विधि युक्ति, उत्तम गुरु ले परमा भक्ति ।

रामप्रकाश तब पावे मुक्ति, सत शास्त्र लक्षण सजाय के।
भ्रम आवा गमन विडारा।६।

राग छन्द भैरवी (२३)

इण्ड पिण्ड आधार है, ब्रह्माण्ड माया विस्तारा।टेर।
पांव तले तल लोक कहावे, वितल लोक चरणों पर गावे।
सुतल लोक जानू मैं लावे, महातल साथल सार है।
पिण्ड मांहीं ब्रह्मण्ड प्यारा।

सांथल मूल में तलातल जानो।
गुह्य देश मैं रसातल मानो, कटि में लोक पताल प्रमानो।
यह सात लोक संसार है, सो नीचे भुवन पुकारा।२।
भूतलोक नाभी में वासा, भूव; लोक का उदर आशा।
स्वर्ग लोक का हृदय निवासा, महर लोक कण्ठ धार है।
जनलोक मुख मैं धारा।३।
मस्तक में तपलोक पुकारे।
सत्यलोक ब्रह्मरन्ध्र उचारे, पुरण सिद्धांत वेदांत रू सारे।
रामप्रकाश लख विचार है, सप्तलोक ऊपर के पारा।४।

राग छन्द भैरवी (३४) पद

सप्तद्वीप शरीर विधान ले, लख गुरु मुख भेद उचारा।टेर।
त्रिकोण हृदय में पर्वत मेरु, नीचे मन्दराचल जानो मेरु।
दक्षिण कौण कैलाश उमेरु, वाम हिमाचल जान ले।
तन भीतर ब्रह्मण्ड सारा।१।

उर्द्ध रेखा निषध को मानो ।
दक्षिण दिशा गंधमादन जानो, रमण वाम रेखा में आनो ।
यह पर्वत सात परमान ले लख संत सिद्धांत विचरणा ।२।
अस्थि जम्बु द्वीप पर वासा, मज्जा शाक द्वीप प्रकाशा ।
मांस मांहि कुश द्वीप निवासा, नाड़ी क्रोंच परधान ले ।
सत रोम लक्ष उचारा ।३।
त्वचा शाल्मलि दीप कहावे ।
नख में पुष्कर द्वीप रहावे सात द्वीप ब्रह्माण्ड सजावे ।
'रामप्रकाश' अधिष्ठान ले, तत्व वेता करे पुकारा ।४।

राग छन्द भैरवी (३५) पद

मैं फूले फकीरी पाय के, अब आप भया मस्ताना ।टेर।
गुरु गम निश्चल साधन शरणा,
शील सजाय धरी घट जरणा ।
भव मांहि अब जनम न मरणा,
सब अविधा द्वैत मिटाय के ।
शुद्ध आप लख्या अधिष्ठाना ।१।
खेल प्रकृति करे करावे ।
गुणवंत इन्द्रिय देव उपावे, कर्म कला तन उपे खपावे ।
वपु प्रारब्ध खेल खिलाय के, नहीं हर्ष शोक का स्याना ।२।
गिरि तरु मंदिर वन घर वासा,
फाके चने मोदक मिठियासा ।

चीर दुशाले नगन निवासा, नहीं मान मर्यादा धाय के ।
अब निर्भय निशंक अवाना ।।३।।
राम प्रकाश सब घट में जान्या ।
राम प्रकाश अखण्डित मान्या,
राम प्रकाश संत शास्त्र परमान्या ।
अब धन धन वेद फरमाय के, दरशावे मग कल्याना ।।टेर।।

राग सोरठ (३६)

फकीरी ! या विध तपस्या ताप ।
शूरा संत फकीरी तापे, कठिन विरह की भाप ।।टेर।।
ज्ञान गुफा प्रेम कर पलथी, आसन आशा दाप ।
नेजा नाम धर्म कर धामा, जाग्रत ज्योति अलाप ।।१।।
शील शिला साधन कर सुर का, पिंड पतर में नाप ।
निरभय नेम सिंहासन साधित, छतर सोहं की छाप ।।२।।
स्मरण श्रद्धा सतचित आनन्द, चेतन देव अमाप ।
चित चेतन ब्रह्म व्यापक सोहं, दरशे आपहि आप ।।३।।
कष्ट कल्पना काठ कंकाली, वर्जित विकार प्रलाप ।
अचल अखण्ड अकर्ता आतम, जोरू जोर नही जाप ।।४।।
अनंत अनादि ज्ञान निर्मल, भ्रांति नाहिं व्याप ।
'रामप्रकाश' फकर का पूरण उत्तमराम अनाप ।।५।।

राग फकीरी, सोरठ (२७)दप

फकीरी ! संत सदा गलतान ।
मन को जीत मरजीवा डोले, नित सांचा स्तान ।टेर।

साधन सहित काट जग संशय, हर्ष शोक कर हान ।
हरदम चिंतन चेतन पूरण अपना आप पिछान ।१।
इच्छाचारी अहंता ममता तज, निर्विकल्प निरबान ।
माया जाल विकार बिडारया, शुद्ध लखा अधिष्ठान ।२।
तीन शरीर अवस्था तीनूं, पांच तंत तज मान ।
गुण तज तीन कोश पंच झूंठा, आप रूप कल्यान ।३।
'उत्तमराम' फिकर तज फुरणा, पाय फकर निज ज्ञान ।
'रामप्रकाश' सच्चिदानन्द केवल, निज का निज सुजान ।४।

राग सोरठ (३८)

फकीरी ? करे संत बड़भाग ।
आशा ममता मन को मारे, दृश्य द्वैत को त्याग ।।टेर।।
पांच तीन का झगड़ा सब ही, फुरणा को तज माग ।
मोह भनन संसृति तज सारी, आपा लखिया जाग ।टेर।
हंस संग साधन उर धारे, लक्षण काटया काग ।
एक अद्वैत रमझ को समझी, तोय तरंग वत झाग ।२।
अनन्य चेतन व्यापक सब ठां, ज्यूं माला में ताग ।
निष्ठा शुद्ध लक्ष पुनि पूरण, नहीं माया का दाग ।३।
अनाशक्ति वपु कर व्यवहारा, त्रिगुण को नहीं फाग ।
'रामप्रकाश' अटल अधिष्ठाना चेतन शुद्ध अलाग ।४।

राग आसावरी (३९) पद

साधो भाई ? टक टक घड़ी पुकारे ।
पल पल घड़ी आयु की बीते घन्टे चोट उचारे ।टेर।

सेकिंड साठ का एक मिनिट हो, वृथा स्वास क्यूं हारे ।
साठ मिनिट का एक घंटा हो, तब घड़ी यूं ललकारे ।।१।।
बीती ऊमर सो फेर न आवे, क्यों तू गर्व करे सुण प्यारे ।
शिर पर काल गिनत स्वासा को, जो टकटक घड़ी धारे ।२
चार सेकण्ड में स्वासा एक हो, पंद्रह होय मिनिटारे ।
नौ सौ स्वासा एक घण्टे में विरथा नहीं गमारे ।।३
गई स्वासा की नाहीं आशा, कर शुभ कर्म सुधारे ।
धर्म ज्ञान हरि स्मरण गुरु का, घड़ी उपदेश प्रचारे ।४।
सत गुरु कहे सुणो शिष्य सांचा, कर पुरुषारथ चारे ।
'रामप्रकाश' घड़ी की सुनलो, प्रकट जिज्ञासु सारे ।५।

राग हेली (४०)

हेलीए ! अनंत महिमा गुरुदेव की, कहे न पावे पार ।टेर।
ज्ञान सुनावे ब्रह्म का काटे द्वैत विकार ।
सत संगत निज देत है, दुर्गुण भ्रम विडार ।।१।।
महा पापी अध जीव को, करता भव से पार ।
मोक्ष धाम परसावता, उत्तम गुरु दरबार ।।२।।
अनन्त ऋषि मुनि संतगण, कवि कोविद षट् चार ।
गुरु महिमा गा गा थक्या तारया अनंत हजार ।।३।।
एक जिभ्या मम-गुण घणे कहां तक कहुं पुकार ।
'रामप्रकाश' समरथ गुरु, गये शेष शिव हार ।।४।।

।। इति ।।

राग टोडी पद (४१)

अब मेरी ! लगन हरि से लागी ।
सब ठां ईश्वर व्यापक जाण्या, आप भया अनुरागी ।टेर।
कर से करु सोई हरि पूजा, लगन मगन रूचि जागी ।
पद से चलू सोई तीर्थागम, पूर्ण रुप बड़भागी ।१।
मुख से कहूं सोई हरि स्तवन, अष्ट पहर धुन लागी ।
श्रवण शब्द सुने सो मंत्र, पाठ परम रुचि आगी ।२।
देखे चक्षु सोई हरि दर्शन, अन्तर वृति बागी ।
भजन सोई प्रसाद हरि का, पावे संत बैरागी ।३।
पांव पसार दण्डवत हरहम, सोवत चलत सभागी ।४।
चितन करे सोई तत चेतन अबना रही अभागी ।
घ्राण लेत सो पूजन बासना और वासना त्यागी ।
रामप्रकाश हरि मय हम हो द्वैत दुर्मति दागी ।५।

।। इति गोरखनाथ भजन माला समाप्त ।।



मुद्रक :—भवानी प्रिन्टर्स, नया बाजार, अजमेर

हमारे यहां मिलने वाला साहित्य

हरी सागर

हरिरामजी महाराज जोधपुर वालों की वाणियों का संग्रह है। ३० साल बाद यह पुस्तक छपकर तैयार हुई है। मूल्य १०)०० डाक खर्च २)५०

वाणी प्रकाश

अचल आश्रम द्वारा प्रकाशित पांच संतो की वाणियों का संग्रह बड़ा ही उत्तम है, मूल्य १३)०० डाक खर्च २)५०

अचलराम भजन प्रकाश

स्वामी अचलरामजी महाराज के ४०० भजनों का संग्रह है। बड़े ही उत्तम भजन हैं। मूल्य १०)०० डाक खर्च २)५० अलग।

उत्तमराम अनुभव प्रकाश

श्री स्वामी उत्तमरामजी महाराज स्वामी अचलरामजी के शिष्य हैं। उनके भी करीब ४०० भजनो का संग्रह है। मूल्य १०)०० डाक खर्च २)५० अलग।

पता—आर्य ब्रदर्स बुकसेलर, पुरानी मण्डी, अजमेर।

उमाराम अनुभव प्रकाश

स्वामी उमारामजी के स्वअनुभव की वाणियों के रूप में जनता को उपदेश दिए हैं वह पुस्तक रुप में छपकर तैयार है। मूल्य ८)०० डाक खर्च २)००।

रामप्रकाश भजनमाला

स्वामी रामप्रकाशजी उत्तमरामजी महाराज के शिष्य हैं। आपने भी जनता को भजनों के रूप में एक तोफा पेश किया है। आध्यात्मिक विषय को भजनों के रूप में पेश किया है करीब १२५ भजन है मूक्ष्य ३)५० डाक खर्च २)००।

ब्रह्मज्ञान भक्ति प्रकाश

स्वामी जीवादासजी महाराज ने बड़े ही परिश्रम से इस पुस्तक को तैयार की है वेदांत के गूढ़ रहस्यों को लेखनी द्वारा तथा भजनों के रुप में दिया है। बड़ी ही उत्तम पुस्तक है मूल्य ८)०० डाक खर्च २)५०।

अनुभव प्रकाश बनानाथ

इस अनुभव प्रकाश में स्वामी बनानाथजी महाराज की वाणियां है। बहुत ही अच्छी पुस्तक है। मूल्य ६)०० डाक खर्च २)०० अलग।